ओ३म्

इस अंक का मूल्य – 2.00 रुपये

आर्य जगत्

कृण्वन्तो विश्वमार्यम्

रविवार, 21 अक्तूबर 2012

आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा का साप्ताहिक पत्र

सप्ताह रविवार 21 अक्तूबर, 2012 से 27 अक्तूबर, 2012

आ. शु. 7 – ● वि० सं०–2069 ● वर्ष 77, अंक 28, प्रत्येक मंगलवार को प्रकाश्य, दयानन्दाब्द 189 ● सृष्टि–संवत् 1,96,08,53,113 ● इस अंक का मूल्य – 2.00 रुपये

कोटा में निराश्रितों ने किया बृहद् यज्ञ

आर्य समाज जिला सभा, कोटा द्वारा एक बृहद् यज्ञ का आयोजन किया गया।

सभा कोटा के प्रधान अर्जुन देव चढ्डा ने बताया कि रंगबाड़ी स्थित मधु स्मृति संस्थान में आर्य विद्वान पंडित रामदेव शर्मा के ब्रह्मत्व व संस्थान की निदेशिका श्रीमती बृजबाला के मुख्य यजमानत्व में संतुलित व समुचित पर्यावरण के लिए यज्ञ किया गया। यज्ञ में संस्थान के निराश्रित बालक–बालिकाओं ने यज्ञ कुंड में आहुतियां डालकर परमपिता परमात्मा से देश में अच्छे पर्यावरण व सुख की प्रार्थना की।

उन्होंने बताया कि जड़ी–बूटियां, सुगंधित एवं औषधिय पदार्थ डालकर इस प्रकार की सामग्री एवं गाय के धृत के साथ डाली गई आहुतियों से पर्यावरण शुद्ध होता है। तथा वृष्टि की पूरी संभावना बन जाती है।

इस अवसर पर आर्य समाज विज्ञान नगर के पूर्व प्रधान जे.एस. दुबे ने ईश्वर स्तुति का भजन ''प्रभु प्यारे से जिसका संबंध है'' प्रस्तुत किया। श्रीमती मधु शर्मा ने भी एक भजन सामूहिक रूप से प्रस्तुत किया।

कार्यक्रम के संयोजक रामप्रसाद याज्ञिक ने यज्ञ के महत्व के बारे में इससे होने वाले लाभ के बारे में जानकारी दी। श्रीमती बृजबाला ने सभी आगंतुकों का आभार व्यक्त किया। तथा शांति पाठ के साथ कार्यक्रम संपन्न हुआ।

अब डी.ए.वी. मुख्यालय की नई यज्ञशाला में होगा हवन

आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा के प्रधान श्री पूनम सूरी जी ने पद संभालते ही क्रान्तिकारी कदम उठाये हैं। महात्मा आनन्द स्वामी के परिवार के इस सपूत के नेतृत्व में आर्य समाज और डी.ए.वी. संस्थाओं में एक ऐसा वातावरण बन गया है कि जगह–जगह आर्य सज्जनों को यह कहते हुए सुना जा सकता है कि आर्य समाज का सवार्ण युग आने वाला है।

डी.ए.वी. के प्रधान बनते ही मान्य श्री पूनम सूरी ने यह घोषणा की थी कि डी.ए.वी. मुख्यालय वैदिक गतिविधियों को प्रेरणा स्रोत बनेगा। इस दिशा में पहला कदम मुख्यालय में हवन यज्ञ करने की योजना लागू की गई। प्रतिमाह होने वाले इस कार्यक्रम में मुख्यालय के पदाधिकारी अधिकारी तथा कर्मचारी सोत्साह भाग लेने लगे हैं।

मुख्यालय के परिसर में एक भव्य यज्ञशाला का निर्माण अपने अन्तिम चरण में है। नवम्बर मास में होने वाला हवन–यज्ञ इस यज्ञ–शाला में ही होगा।

नाहन में डी.ए.वी. के नवनिर्मित परिसर का उद्घाटन

डी.ए.वी. नाहन के प्रांगण में आर्यवचन समावेश समारोह का आयोजन किया गया। समारोह के मुख्य अतिथि श्री पूनम सूरी जी, प्रधान, डी.ए.वी. कॉलेज प्रबंधकर्तृ समिति, थे। इसके अतिरिक्त श्रीमति मणि सूरी, श्री वी.के. गुप्ता, क्षेत्रिय निदेशिका, श्रीमति शशि किरण गुप्ता, क्षेत्रिय निदेशका, श्री विजय कुमार, क्षेत्रिय निदेशक, श्री वी.सिंह, श्री यशवीर आर्य व अन्य गणमान्य लोगों की उपस्थिति ने समारोह की शोभा बढ़ाई। समारोह का शुभारंभ श्री पूनम सूरी जी द्वारा दीप प्रज्ज्वलित करके किया गया। तदोपरान्त नवनिर्मित विद्यालय परिसर का उद्घाटन, प्रधान, श्री पूनम सूरी जी, के करकमलों द्वारा समपन्न हुआ। श्रीमति मणि सूरी जी के वैदिक ज्योति प्रज्ज्वलित की। तत्पश्चात् श्री पूनम सूरी जी ने विद्यालय के नवनिर्मित भवन का निरीक्षण किया।

इस अवसर पर मुख्य अतिथि श्री पूनम सूरी जी ने स्कूल के संगीत अध्यापक श्री सुनील कुमार द्वारा स्वरचित व संगीतबद्ध संगीत एलबम का विमोचन किया जिसे स्कूल के विद्यार्थियों ने ही स्वर दिया है।

प्रधानाचार्य श्री नरेश कटोच जी ने आर्य युवा समाज, नाहन की गतिविधियों का विवरण एक पावर प्वाइंट प्रस्तुति द्वारा किया जिसमें समय–समय पर आयोजित समाज सेवा कार्यक्रमों व वैदिक मूल्यों के प्रसार व प्रचार में आर्य युवा समाज, नाहन की भूमिका को दर्शाया गया। मुख्य अतिथि ने विद्यालय द्वारा किए गए प्रयासों को भूरि–भूरि प्रशंसा की तथा भविष्य में भी इन गतिविधियों को जारी रखने का आह्वान किया। श्री पूनम सूरी जी ने महर्षि दयानन्द के जीवन की कुछ महत्त्वपूर्ण घटनाओं पर प्रकाश डाला। उन्होंने डी.ए.वी. संस्थाओं की स्थापना के मुख्य उद्देश्य पर बल देते हुए कहा कि मौजूदा समाज में विज्ञान व आधुनिक शिक्षा के साथ–साथ वैदिक व नैतिक मूलयों के समावेश की भी आवश्यकता है क्योंकि वैदिक ज्ञान व नैतिक मूल्य ही मनुष्य का चरित्र निर्माण करते हैं और डी.ए.वी संस्थान इस कार्य को भलीभाँति पूर्ण कर रहे हैं।

समारोह के अंत में श्रीमति शशिकिरण गुप्ता व प्रधानाचार्य श्री नरेश कटोच ने श्री पूनम सूरी जी का धन्यवाद करते हुए निकट भविष्य में भी आर्य युवा समाज की गतिविधियों को सुचारू रूप से जारी रखने का आश्वासन दिया।

स्वजातीय या विजातीय ईश्वर अथवा अपने आत्मा में तत्त्वान्तर वस्तुओं से रहित एक होने से वह 'अद्वैत' है। – स. प्र. समु. १

संपादक – श्री पूनम सूरी

ओ३म्
आर्य जगत्
सप्ताह रविवार, 21 अक्टूबर 2012 से 27 अक्टूबर 2012

सर्वाङ्ग-सुन्दर बनें

● डॉ. रामनाथ वेदालंकार

सं वर्चसा पयसा सं तनूभिः, अगन्महि मनसा सं शिवेन।
त्वष्टा सुदत्रो विदधातु रायो, अनु मार्ष्टु तन्वो यद् विलिष्टम्।।

यजु. २.२४

ऋषिः **वामदेवः**। देवता **त्वष्टा**। छन्दः **त्रिष्टुप्।**

● [हम] (**वर्चसा**) ब्रह्मवर्चस से [और], (**पयसा**) दूध से, माधुर्य से, (**सम् अगन्महि**) संयुक्त हों, (**तनूभिः**) शरीरों से, (**सम्**) संयुक्त हों, (**शिवेन मनसा**) शिव मन से, (**सम्**) संयुक्त हों।, (**सुदत्रः**) शुभ दानी, (**त्वष्टा**) जगद्-रचयिता परमेश्वर, (**रायः**) [धन, चक्रवर्ती राज्य, सुख, आरोग्य आदि] ऐश्वर्यों को, (**वि-दधातु**) प्रदान करे, [और], (**यत्**) जो, (**तन्वः**) शरीर का, (**विलिष्टं**) त्रुटिपूर्ण अंग है, उसे, (**अनु मार्ष्टु**) परिमार्जित करे।

● हम चाहते हैं कि हम संसार में सर्वांग-सुन्दर बनकर रहें, षोडशकल चन्द्र के समान परिपूर्ण बनकर निवास करें। हमारे अन्दर ब्रह्मवर्चस हो, आत्मिक तेज हो, जिसके सम्बन्ध में कभी ऋषि विश्वामित्र ने कहा था कि ब्रह्म-तेज ही सच्चा बल है, अन्य बल उसके सम्मुख निःसार है। वह ब्रह्म-तेज का ही बल है, जिसके द्वारा शरीर से दुर्बल होते हुए भी अनेक मानव कोटि-कोटि जनों को अपने चरणों में झुकाते रहे हैं। साथ ही हमें 'पयः' भी प्राप्त हो। 'पयस्' शब्द दूध का वाचक होता हुआ भी रस, माधुर्य, शान्ति, निर्मलता, निश्छलता, सात्त्विकता आदि का भी द्योतक है। हमें पीने के लिए गो-रस और हृदय में बसाने के लिए उक्त माधुर्य आदि गुण प्राप्त हों। हम शरीरों से भी पुष्ट हों। हृदय में बसाने के लिए उक्त माधुर्य आदि गुण प्राप्त हों। हम शरीरों से भी पुष्ट हों। हमारे अन्नमय, प्राणमय, मनोमय, विज्ञानमय तथा आनन्दमय रूपवाले पंच शरीरों का समुचित विकास हो। हमारा मन भी शिव हो, क्योंकि जब तक मन अशिवसंकल्पों से युक्त रहेगा, तब तक हमें किसी भी क्षेत्र में उत्कर्ष प्राप्त होना सम्भव नहीं है। मन को साधकर ही मनुष्य उन्नति की ओर अग्रसर होता है, और मन की जीत पर ही उसकी जीत निर्भर है, मन के हारने पर उसका हारना अवश्यम्भावी है।

'त्वष्टा' परमेश्वर सारे जगत् का तरखान है, शिल्पी है, जिसका हस्त-कौशल सम्पूर्ण विश्व में प्रत्यक्ष दृष्टिगोचर हो रहा है। वह **'सुदत्र'** है, निरंतर सबको शुभ वस्तुओं का दान करता रहता है। वह हमें भी शुभ ऐश्वर्यों का-धन, चक्रवर्ती राज्य, सुख, आरोग्य आदि का दान करे। वह हमें भौतिक एवं आध्यात्मिक समस्त शुभ सम्पत्तियों का अधीश्वर बनादे। हमारे शरीर का कोई अंग यदि सदोष या त्रुटिपूर्ण हो गया है, तो वह कुशल शिल्पी उसे परिमार्जित, सुसंस्कृत एवं परिशुद्ध कर दे। यदि हमारे नेत्रों की दृष्टि-शक्ति मन्द हो गई है अथवा दृष्टि-शक्ति मन्द हो गई है अथवा दृष्टि-शक्ति तीव्र होते हुए भी हम उसका उपयोग अभय दृश्यों को देखने में करते हैं, तो त्वष्टा प्रभु हमारी मन्द या अपवित्र नेत्र-शक्ति को शुद्ध कर दें। इसी प्रकार श्रोत्र, मुख, नासिका आदि अन्य अंगों को भी मांजकर तीव्र-शक्तिमय एवं पवित्र कर दे। हे कलाकार त्वष्टा प्रभु! तुम हमारी तूलिका से रंग भरकर हमें सर्वांग-सुन्दर, सर्व-गुण-सम्पन्न और सर्व-शक्ति-समन्वित कर दो।

❑

वेद मंजरी से

इस अंक में प्रकाशित सभी लेखों में व्यक्त भावों व विचारों के लिए लेखक स्वयं उत्तरदायी हैं और इसमें किसी आपत्तिजनक बात के लिए 'सम्पादक' एवं 'आर्य जगत्' उत्तरदायी नहीं होगा।

उपनिषदों का संदेश

● महात्मा आनन्द स्वामी

पिछले अंक में हमने पड़ा कि तीसरे दिन की कथा समाप्त करते हुए स्वामी जी ने कहा उपनिषद् के तीन संदेश तो थे – दृढ़ संकल्प, उतम विचार, त्यागपूर्ण भोग और चरित्र की पवित्रता। चौथा सन्देश वह है जिससे उपनिषद् का वास्तविक आरम्भ होता है।

याज्ञवल्क्य ने गार्गी को सम्बोधित करते हुए कहा – ''सुनो गार्गी। यह अक्षर जो कभी नष्ट न होने वाला है असको जाने बिना कोई व्यक्ति सहस्र वर्ष तक भी यज्ञ करता है और तप करता है उसका सह सब नष्ट होने वाला है।........'' यह है उपनिषदों का चौथा सन्देश।

परन्तु यह नष्ट न होने वाला अक्षर है क्या ?

आगे पढ़िये ....

ओं त्वं हि नः पिता वसो त्वं माता शतक्रतो बभूविथ।
अधा ते सुम्नमीमहे।।

मेरी प्यारी माताओ तथा सज्जनो! कल मैं उपनिषद् के वास्तविक तत्त्व का वर्णन कर रहा था। उपनिषद् का पहला सन्देश यह है कि दृढ़ संकल्पवाले बनो। दूसरा सन्देश यह है कि दुरितों के लिए दृढ़ संकल्प न करो, श्रेष्ठ कर्म के लिए करो। इसके लिए अपने में सुविचार उत्पन्न करो। तीसरा सन्देश यह है कि धन का, अन्न का, प्रभूत अर्जन करो– **अन्नं बहु कुर्वीत, अन्नं न निन्द्यात्**– बहुत अन्न उत्पन्न करो, अन्न की निन्दा न करो। अन्न का अर्थ प्रत्येक वह वस्तु है जो सुख देती है, जो प्यारी है, जिसकी हम कामना करते हैं। धन, सम्पत्ति, शक्ति, शासन सभी अन्न हैं। उपनिषद कहताहै कि बहुत अन्न उत्पन्न करो। बहुत धन कमाओ, क्योंकि धन के बिना मनुष्य का कोई भी कार्य चलता नहीं। तब उपनिषद् का चौथा सन्देश यह है धन, सम्पत्ति, शक्ति और शासन प्राप्त करो अवश्य, परन्तु अपने लिए नहीं, दूसरों के लिए।

त्येक्तेन भुञ्जीथा– त्याग से भोग करो। जो दीन और दुःखी हैं, रोगी हैं और सहायता चाहते हैं, उसकी सहायता के लिए, अर्जित धन को खर्च करो। यही धन की सफलता है। धन कमाओ अवश्य परन्तु उसमें फँस न जाओ। उपनिषद् का पाँचवाँ सन्देश यह है कि यदि संकल्प दृढ़ है, विचार शुभ हैं, धन-संग्रह कर लिया है, उसे दूसरों के भले के लिए खर्च भी कर दिया है तो स्मरण रखो, यदि तुम्हारा चरित्र अच्छा नहीं तो तुम्हारा मूल्य दो कौड़ी भी नहीं। चरित्र-निर्माण करो! चरित्र बनाओ! यह उपनिषद् का पाँचवाँ सन्देश है।

परन्तु ये सब बातें कहने के पश्चात् मैं आपको उपनिषद् का वास्तविक सन्देश सुना रहा था। यह वह सन्देश है, जिसको उपनिषदों का वास्तविक तत्त्व (निचोड़) कहना चाहिए। आपका संकल्प दृढ़ है, विचार उत्तम हैं, धन कमाकर, चरित्र का निर्माण कर परोपकार कर रहे हैं, यज्ञ कर रहे हैं, गुरुकुल, अस्पताल, अनाथालय, स्कूल, कॉलिज, कुएँ, तालाब, बनवा रहे हैं, परन्तु इस वास्तविक तत्त्व को आपने नहीं जाना। यदि उपनिषद् के वास्तविक उपदेश को नहीं समझा और उसे क्रियात्मकरूप से जीवन में नहीं अपनाया तो उपनिषद् कहता है कि सब-कुछ करना व्यर्थ है, क्योंकि वह सब नष्ट होनेवाला है–

यो वा एतदक्षरं गार्गी अविदित्वाऽस्मिल्लोकेजुहोति, यजते, तपस्तप्यते बहूनि वर्षसहस्त्राणि, अन्तवदेवास्य तद् भवति।

"सुनो गार्गी! यह जो अक्षर है, उसको जाने बिना जो व्यक्ति इस संसार में यज्ञ करता है, तप करता है, कई सहस्त्र वर्ष तक करता है, उसका यह सब नाश होनेवाला है। इनमें से कुछ भी स्थायी नहीं है।"

इससे आगे चलकर महर्षि याज्ञवल्क्य ने कहा–

यो वा एतदक्षरं गार्गी, अविदित्वाऽस्माल्लोकात्प्रैति स कृपणोऽथ। य एतदक्षरं गार्गी विदित्वाऽस्माल्लोकात्प्रैति स

ब्राह्मणः।।

"सुनो गार्गी! यह जो अक्षर है न, इसको जाने बिना जो व्यक्ति संसार से चला गया, समझो कि बहुत घाटे में रह गया। उसकी अवस्था दयनीय है, वह दया का पात्र है; और जो इस अक्षर को जानने के पश्चात् संसार से गया, वही ब्राह्मण है, वही विद्वान् है, उसी के सम्बन्ध में कहना चाहिए कि वह सब–कुछ जानता है।" और फिर दूसरे उपनिषद् में कहा है–

इह चेतवेदीदथ सत्यमस्ति न चेदिहावेदीन्महती विनष्टिः।।

"वह अक्षर यहीं, इसी संसार में जाना जा सकता है। यदि इसको नहीं जाना तो समझो कि बहुत–बहुत बड़ा विनाश हो गया।" कठोपनिषद् का ऋषि भी यही कहता है–

य इह चेदशकद् बोद्धुं प्राक् शरीरस्थ विस्त्रसः।

ततः सर्गेषु लोकेषु शरीरत्वाय कल्पते।। 6 । 4 ।।

"सुनो भाई! यदि मरने से पूर्व इस शरीर में ही अक्षर को जान लिया तो ठीक, नहीं तो कई कल्प तक शरीर को धारण करना पड़ेगा। आवागमन के इस चक्र से छुटकारा नहीं मिलेगा।

और फिर प्रजापति ने भी तो यही घोषणा की थी। दूसरे ऋषियों ने भी तो यही कहा है कि मानव–शरीर में ही 'अक्षर' को जाना जा सकता है। यदि उसे जाने बिना यह शरीर छूट गया है तो समझो कि बहुत बड़ा घाटा हो गया; क्योंकि मानव–शरीर ही वह शरीर है जिसमें परमात्मा ने आत्मा को अधिकार दिया है वह अक्षर को जाने। दूसरे किसी शरीर में यह अधिकार है नहीं, दूसरे शरीर में यह बात नहीं हो सकती। कहते हैं चौरासी लाख योनियाँ हैं। अब पूरा चौरासी लाख हैं अथवा कम या अधिक, यह तो किसी ने देखा नहीं; परन्तु 84 लाख हों या 84 करोड़, एक बात बिल्कुल निश्चित है कि आत्मदर्शन कर्मभोग के लिए है।

सुनो! एक था बेचारा सूरदास। वह ऐसे दुर्ग में फँस गया जिसमें भयानक अग्नि जल रही थी। कितने ही भयानक पशु वहाँ चिल्ला रहे थे। एक ओर वह झुलसा देनेवाली गर्मी, दूसरी ओर इस भयानक पशुओं की गर्जना और दहाड़। बेचारे सूरदास ने प्रयत्न किया कि दुर्ग के बाहर निकले। परन्तु जिधर भी वह जाता, उधर का द्वार उसे बन्द मिलता। 84 लाख द्वार थे, वहाँ परन्तु बेचारे सूरदास को एक भी द्वार खुला नहीं मिला। भय और कष्ट से घबरा गया। चिल्लाकर बोला, "अरे कोई मुझ पर दया करो। बताओ कि इस दुर्ग में कोई द्वार भी या नहीं?"

एक और व्यक्ति ने उसकी अवस्था देखी। उसके पास जाकर कहा, सूरदास! 84 लाख द्वार हैं यहाँ, केवल एक खुला है। सूरदास ने विनयपूर्वक पूछा, "कौन–सा द्वार?" उस व्यक्ति ने कहा, "वह सामने वाली दीवार में है, परन्तु बहुत दूर। तुझे दिखाई देता नहीं। इधर से उस द्वार तक पहुँच न पायेगा। मेरे साथ आ। मैं तेरा हाथ इस दीवार पर रख देता हूँ। इसको छूता हुआ चला जा। जहाँ खुला द्वार आयेगा, वहाँ से बाहर चले जाना।" उस व्यक्ति ने सूरदास का हाथ रख दिया दीवार पर। सूरदास चलने लगा। परन्तु उसे खुजली की बीमारी थी। बार–बार खुजली उठती। वह खुजलाता और चलता जाता था। और जब खुले द्वार के पास पहुँचा तो पुनः खुजली जाग उठी। फिर 84 लाख द्वारों के चक्र में पड़ गया।

आपको इस बेचारे सूरदास पर दया आती है। मन–ही–मन आप सोचते हैं कितना अभागा है वह! परन्तु सोचा मेरे भाई! क्या अपने–आप पर दया नहीं कर सकते? अरे, हम भी तो उस सूरदास की भाँति हैं। 84 लाख योनियों के चक्र में पड़े हैं। 84 लाख बन्द द्वार हैं यहाँ। दुःखों–कष्टों की अग्नि जल रही है यहाँ। पाप–ताप के पशु दहाड़ रहे हैं। केवल एक द्वार खुला है– यह मानव–योनि। किसी ज्ञानी ने कृपा करके कहा– इस द्वार से बाहर निकल जाओ। परन्तु हाय रे अभागे! इस खुले द्वार के समीप पहुँचकर तेरे अन्दर तृष्णा, विषय–वासना की खुजली जाग उठती हैं, दीवार से हाथ उठाकर तू खुजलाने लगता है, खुलजाता हुआ आगे बढ़ जाता है और वही 84 लाख का चक्कर!

उस बेचारे अन्धे पर दया करते हो, अपने–आप पर नहीं कर सकते? कब तक भटकते रहोगे इस दुर्ग में जहाँ दुःख–ही–दुःख हैं, कष्ट–ही–कष्ट हैं? यह मानव शरीर तुम्हारे समक्ष है। काम, क्रोध, लोभ, मोह, अंहकार की खुजली में फँस गये तो द्वार फिर निकल जायेगा और वह निकल गया तो 'महती विनष्टि' बहुत बड़ा विनाश होगा। यह बात है जो महर्षि याज्ञवल्क्य ने गार्गी को कही।

परन्तु तब प्रश्न उत्पन्न होता है कि यदि द्वार है तो इससे बाहर कैसे जायें? किससे पूछें कि इस खुले द्वार से बाहर कैसे जाया जायेगा?

महफ़िले–हस्ती में किससे यार का पूछूँ पता?

शमा[1] भी खामोश है, परवाना[2] भी ख़ामोश है।।

किससे पूछूँ मुक्ति का मार्ग? जो लोग ऐसा प्रश्न पूछते हैं, जो इस जलते हुए दुर्ग से बाहर जाना चाहते हैं, उनके लिए उपनिषद् कहता है–

उत्तिष्ठत जाग्रत प्राप्य वरान्निबोधत।

क्षुरस्य धारा निशिता दुरत्यया दुर्गं पथस्तत्कवयो वदन्ति।।

"उठो! जागो! जाओ उन लोगों के पास जो आत्मा को जानते हैं, उनसे परमात्मा को जानने का मार्ग मिलेगा। परन्तु स्मरण रखो! यह मार्ग सरल नहीं। बहुत कठिन है यह मार्ग। बहुत साहस एवं धैर्य से इस पर चलना पड़ता है।"

जो तोहे प्रेम करन का चाव।

सिर धर तली गली मोरी आओ।

सिर देना पड़ता है इस सौदे में, क्योंकि 'क्षुरस्य धारा निशिता दुरत्यया'–'यह मार्ग ऐसा है जैसे उस्तरे की तीक्ष्ण धार हो।' उस धार के ऊपर चलना जिस प्रकार कठिन है उसी प्रकार यह मार्ग भी कठिन हैं। जो जानते हैं वे भी कहते हैं कि बहुत कठिन मार्ग हैं यह। यहाँ मन को मार देना पड़ता है, वासना को समाप्त कर देना पड़ता है, बुद्धि को निर्मल बनाना पड़ता है।

परन्तु इस मार्ग के सम्बन्ध में गुरु से पूछने की बात केवल कठोपनिषद् ने ही नहीं कहीं, मुण्डक उपनिषद् ने भी कही है।

मुण्डक कहता है–

तद्विज्ञानार्थं स गुरुमेवाभिगच्छेत् समित्पाणिः,

श्रोत्रियं ब्रह्मनिष्ठम्।

"इस अक्षर के ज्ञान को प्राप्त करने के लिए जिज्ञासु गुरु के पास जाये।" विज्ञान का अर्थ है आत्मा का ज्ञान, और इस विज्ञान को प्राप्त करने के लिए किस प्रकार जाये? क्या अकड़कर? अभिमान के साथ? संसार भर की चिन्ताओं को और चंचलता को साथ लेकर? नहीं, उपनिषद् कहता है– "सामित्पाणिः हाथ बाँधकर, हाथ जोड़कर, हाथों में गुरु के लिए भेंट लेकर। इसी मुण्डक में आगे चलकर ऋषि कहता है–

तस्मै स विद्वानुपसन्नाय सम्यक् प्रशान्तचित्ताय शमान्विताय।।

अर्थात् "गुरु जिसको ब्रह्मविद्या का ज्ञान दे, उसे अच्छी प्रकार शान्तचित्त होना चाहिए। उसके मन में पूर्ण शान्ति होनी चाहिए। चञ्चलता नहीं।" इस प्रकार गुरु के पास जाये। परन्तु कौन–से गुरु के पास? "श्रोत्रियं ब्रह्मनिष्ठम्"– जो वेद का जाननेवाला है, वेद का विद्वान है और जो स्वयं ब्रह्म में रहता है; आत्मा और परमात्मा को केवल पुस्तकों के ज्ञान से नहीं, अपने अनुभव से जान चुका है, ऐसे गुरु के पास जाये।

यह तो हम सब कहते हैं कि गुरु बिना ज्ञान नहीं, परन्तु आजकल गुरु को पहचानना ही कठिन हुआ जाता है। दुकान बहुत हैं, साइनबोर्ड बहुत लगे हैं। इनमें से ठीक गुरु कौन है, इसका जानना साधारण व्यक्ति के लिए कठिन हुआ जाता है।

उपनिषद् ने कहा– गुरु वह है जो वेदों का विद्वान् हो और ब्रह्मनिष्ठ हो। परन्तु ब्रह्मनिष्ठ कौन है, यह कैसे पता लगे, सीधी सी बात है–आत्म–दर्शन का मार्ग वही बता सकता है जिसने स्वयं आत्म–दर्शन किया हो। गंगोत्री का मार्ग वह बता सकता है जो स्वयं गंगोत्री गया हो। मैं बहुत बार गंगोत्री गया हूँ। एक–एक नदी, एक–एक घाटी, एक–एक पर्वत मुझे ज्ञात है। यदि कोई मुझे पूछे तो मैं कहूँगा– भाई मेरे! रेलगाड़ी में बैठकर ऋषिकेश जा। ऋषिकेश से धरासू तक बस जाती है। दिनभर वह चलती है। धरासू से आगे 78 मील पैदल चलना होगा। धरासू से 18 मील आगे उत्तरकाशी है। उससे 18 मील आगे भटवारी। उससे नौ मील के अन्तर पर गगतानी, अब नौ मील परे हरशल; हरशल से दो मील आगे धराली और अब तेरह मील आगे गंगोत्री। जा, चला जा इस मार्ग से। परन्तु यदि मैं गंगोत्री गया ही नहीं तो उसे बताऊँगा क्या? यदि सच्चाई से अपने अज्ञान को स्वीकार न करूँ तो इधर–उधर की गप्पें मारकर उसे भूल–भुलैयाँ में डालूँगा। रोब जमाने के लिए कह दूँगा, 'यहाँ से कलकत्ते जा। कलकत्ते से हाँगकाँग जाके टोक्यो पहुँच। वहाँ से वायुयान द्वारा सानफ्रांसिसको जा, वहाँ से न्यूयार्क पहुँच, तब लन्दन, पैरिस और इस्तम्बोल से होकर स्वेज् में पहुँच। वहाँ तब लालसागर को पार करके अरब सागर में आके बम्बई तक आ। वहाँ से रेल में बैठकर ऋषिकेश पहुँच।' तो बताओ, उस बेचारे का तो हो गया कूण्डा! सारा संसार घूम गया, गंगोत्री तक पहुँचा नहीं! ऐसे गुरु का लाभ नहीं।

अथर्ववेद का 'भूमि–सूक्त' आतंकवाद का सही ईलाज है

● प्रो. ओमकुमार आर्य,

अथर्ववेद के 12वें काण्ड में 5 अनुवाक 5 सूक्त और कुल 304 मंत्र है। इस काण्ड का प्रथम सूक्त 'भूमि–सूक्त' कहलाता है क्योंकि इसका देवता–विषय भूमि है। इसमें पृथिवी, भूमि, मातृभूमि राष्ट्र के निर्माण, उसकी रक्षा, उसके संवर्द्धन, सर्वांगीण विकासादि विषयों पर विस्तारपूर्वक प्रकाश डाला गया है और राष्ट्र–रक्षा के बड़े ही प्रभावी उपाय भी बताये गये हैं। इस काण्ड का हमारे देश के लिये आज सर्वाधिक महत्त्व है, इसमें बताये गये उपाय अपनाने की वर्तमान में महत्ती आवश्यकता है। हमारा राष्ट्र आज बहुत सारी आन्तरिक एवं बाहरी समस्याओं से जूझ रहा है। क्षेत्रवाद, भाषावाद, जातिवाद, भ्रष्टाचार, कालाधन आदि हमारे लिये समस्या नहीं, नासूर बनते जा रहे हैं और सत्तालिप्सु नेताओं की संकीर्ण अवसरवादी, वोट बैंक की घटिया राजनीति कोढ़ में खुजली का काम कर रही है। इधर राष्ट्र में विघटनकारी ताकतें राष्ट्र के लिये खतरा बनती जा रही हैं, राष्ट्रीय एकता और अखण्डता पर संकट मण्डरा रहा है, आतंकवाद ने राष्ट्र की सुरक्षा पर प्रश्न चिन्ह् लगा दिया हैं और सत्तालोभी, धनलोभी राजनेता (सारे न सही, अधिकांश) कुर्सी–खेल में मग्न हैं, विधान सभाओं, संसद आदि में धक्का, मुक्की, हाथापाई करने में मशगूल है, संसद जैसी सर्वोच्च संस्था की गरिमा को तार–तार कर रहे हैं और दोषारोपण अन्यों पर कर रहे हैं, शायद उलटा चोर कोतवाल को डांटे वाली कहावत ऐसे ही जन प्रतिनिधियों (?) के लिए बनाई गई है।

समस्याओं में सबसे बड़ी समस्या है आतंकवाद। गत लगभग अढ़ाई दशक से राष्ट्र प्रोक्षी युद्ध और स्पष्ट नीति एवं राजनैतिक दृढ़ इच्छा के अभाव के चलते यह समस्या बजाय घटने के बढ़ती जा रही है। यदि हम अथर्ववेद के 12वें काण्ड के प्रथम सूक्त के समस्त 63 मंत्रों का सम्यक अध्ययन करें और उनमें वर्णित रक्षा के उपायों को ईमानदारी तथा सख्ती से लागू करें तो 'आतंकवाद' पलक झपकते ऐसे मिट जायेगा, गायब हो जायेगा जैसे भगवान भाष्कर के उदय होने पर अंधेरा मिट जाता है। आइए, उक्त काण्ड के 63 में से कुछेक मंत्रों पर विचार कर लें कि राष्ट्र–रक्षा के कौन से प्रभावी उपाय उनमें बताये गये हैं।

इस संदर्भ में अथर्व 12/1/1 मंत्र बहुत ही महत्वपूर्ण है। यह मंत्र अगले सभी मंत्रों की बुनियाद है, सूक्त में आगे जो भी आया है वह उन विचारों एवं सूत्रों का विस्तार ही है जो प्रथम मंत्र के एक–एक शब्द में निहित है। राष्ट्र में कैसा वातावरण हो, हम से धारण एवं रक्षित की गई मातृभूमि हमें क्या–2 देती है और सारे वातावरण को इतना सुखद, सुहावना और सुरक्षा पूर्व किन उपायों से बनाया जा सकता है यह सब इस मंत्र में आया है। राष्ट्र को ठीक से धारण करने का अर्थ यही तो है कि राष्ट्र में भूख हो, न बेरोजगारी, न अशांति हो, न अव्यवस्था, न अपराध हों और न आतंकवाद जैसी कोई समस्या। वेद में या अन्य प्राचीन ग्रन्थों में उग्रवाद, आतंकवाद, नक्सलवाद या अन्य ऐसे नाम तो कहीं–नहीं मिलेंगे लेकिन उन कारणों का उल्लेख अवश्य मिल जायेगा जो ऐसी समस्याओं को जन्म देते हैं और वे उपाय भी मिल जायेंगे जिन्हें लागू करें तो ऐसी समस्यायें दूर भी हो जायेंगी आइये प्रथम मंत्र को लें–

ओं सत्यं बृहदृतमुग्रं दीक्षा तपो ब्रह्म यज्ञ पृथिवीं धारयन्ति।

सा नो भूतस्य भव्यस्य पत्न्युरुं लोकं पृथिवी नः कृणोतु।। अथर्व 12/1/1

इस मंत्र में जो छः गुण बताये गये हैं उनमें तात्पर्य यह है कि इन गुणों से युक्त राजा–शासक ही पृथिवी को ठीक से धारण कर सकता है। जैसा कि ऊपर स्पष्ट कर दिया गया है कि धारण करने में यह सब कुछ शामिल है–

1. सुव्यवस्था 2. सबका समुचित विकास 3. अन्दर बाहर की सुरक्षा 4. दुष्ट तत्वों पर अंकुश आदि।

इसलिये पहला धारक तत्त्व है – "बृहत्सत्य' राजा का सारा व्यवहार सत्य पर आधारित है। विडम्बना यह भी है कि सबके अपने–अपने सत्य 'सत्य' हैं। शासक दलों का अलग और इसी अनैक्य अथवा विरूपता का अनुचित लाभ उठाते हुये असामाजिक तत्त्व वास्तविक सत्य को दबा देते हैं तथा फर्जी सत्य का सहारा लेकर कानून व्यवहार को धत्ता बताकर साफ बच निकलते हैं और नये सिरे से षडयंत्र रचकर राष्ट्र में अशांति, अव्यवस्था, अस्थिरता पैदा करते हैं। आतंकवाद से लड़ने के लिए हमें वोट बैंक की ओछी राजनीति से ऊपर उठकर इस सत्य को स्वीकारना होगा कि 'आतकवाद' आतंकवाद है, वह न 'भगवा' है न 'हरा' न नीला। पर आज का राजनेता इतना नैतिक साहस और राष्ट्रीय सोच नहीं रखता कि 'आतंकवाद' को 'आतंकवाद' मानकर इसको समूल नष्ट करने का संकल्प कर सके।

फिर दूसरा तत्त्व है 'उग्र ऋत' अर्थात् कठोर, निष्पक्ष, सजग, त्वरित दण्ड एवं न्याय व्यवस्था। आज सामान्य एवं जघन्य दोनों प्रकार के अपराध इसलिये बढ़ रहे हैं कि हमारी दण्ड एवं न्याय–व्यवस्था अत्यन्त शिथिल, सुस्त है, संवेदनशील है ही नहीं। दादा केस करता है, निर्णय पोता सुनता है, पोता भी सुनले तो गनीमत हैं, बात प्रपौत्र तक चली जाती है। हम बार–बार कहते हैं, 'Justice delayed is justice denied' लेकिन वास्तविकता 'delay' और denial की ही है। हमारी इच्छा शक्ति का तो यह हाल है कि सर्वोच्च न्यायालय ने भी जिन खूंखार अपराधियों की मौत की सजा पर मुहर लगा दी हुई है। वे आज भी फांसी के फंदे से बहुत दूर हैं, हमारी न्यायप्रणाली को ठेंगा दिखा रहे हैं। वेद कहता है कि तुम्हारे नियम, दण्ड विधान न्याय प्रणाली (ऋत) एक दम उग्र हो, फिर देखना न संसद पर हमला होगा, न अक्षरधाम पर, न मुम्बई पर, न हाईकोर्ट के पास बम धमाका होगा। न 2–जी घोटाला, न कोयला आवंटन में पहले बाजी, क्योंकि उन्हें पता चल जायेगा कि एक बार भी कहीं फंस गये तो रगड़ दिये जाओगे। लेकिन यह तब होगा जब न्याय का डण्डा मजदूर की कुटिया से लेकर जनपथ, राजपथ, रेसकोर्स, राजमहल और राष्ट्रपति भवन तक समान रूप से चलेगा प्रभावी ढंग से चलेगा। निष्पक्ष दण्ड व्यवस्था ही राज्य में सुख, शांति और सुव्यवस्था का सुदृढ़ आधार है। मनु महाराज कहते हैं–

दण्डः शास्ति प्रजाः सर्वा दण्ड एवाभिरक्षिति।
दण्डः सुप्तेषु जागर्ति दण्ड धर्मं विदुर्बुधाः।।

किन्तु दण्ड उसी के हाथों सही सम्हाली जाती है जो शुचि है, सत्यसंध है, शास्त्र के अनुसार जिसका आचरण है। कठपुतलियाँ, कठपुतली नचाने वाली अंगुलियाँ और चापलूस लोग दण्ड व्यवस्था को न लागू कर सकते हैं, न सम्हाल सकते है। मनु महाराज फिर कहते हैं–

शुचिना सत्यसंधेन यथाशास्त्वा नु सारिणा।
प्रणेतुं शक्तये दण्डः सुसहायेन धीमता।।

अथर्ववेद के द्वादश काण्ड के प्रथम सूक्त का यह प्रथम4 मंत्र ही समस्त राज्य व्यवस्था को एकदम ठीक रखने के लिये बहुत कुछ कह देता है। इसमें आये हुये अन्य तत्त्व, दीक्षा, तप, ब्रह्म, यज्ञादि पर विस्तार से चर्चा नहीं की जा सकती क्यों लेख का कलेबर सीमित है, स्थानाभाव है। एक मंत्र और देखिये–

ओं यो नो द्वेषत पृथिवि यः पृतन्याद्
थोऽभिदासान्मनसा यो वधेन।
तं नो भूमे रन्धय पूर्वकृत्वरि।। अथर्व 12/1/14

अर्थात् जो हम से द्वेष करता है, सेना लेकर हम पर चढ़ाई करता है, हमें दास बनाना चाहता है, उस दुष्ट का विनाश कर दो। मंत्र 12/1/32 कहता है कि जो भी हम पर आगे से पीछे से, दाये से बायें से, किसी भी ओर से प्रहार करता है, जो हमें लूटने, वध करने के इरादे से हम पर झपटता है उसे भी दूर कर दो अर्थात् उसका भी नाश कर दो। यही भाव मंत्र 12/1/54 में व्यक्त किये गये हैं। यह उक्ति तो सारे सूक्त का सार है कि हे पवित्र मातृभूमि, हमारी पूजनीया जन्मभूमि तू सब प्रकार से हमें सुख देने वाली हो और तुम्हारी रक्षा हेतु हम सदा तत्पर रहें अपना सब कुछ तुम पर न्यौछावर कर दें–

.... **वयं तुभ्यं बलिहृतः स्याम।।** अथर्व 12/1/62

इससे पूर्व यह सूक्त स्पष्ट शब्दों में कहता है कि अपना राष्ट्र अपनी मातृभूमि सदा, सर्वथा रक्षणीया हैं क्योंकि इसके साथ हमारा माँ–बेटे का संबंध है–

.... **माता भूमि पुत्रोऽहं पृथिव्याः।।** अथर्व 12/1/12

इनसे सारे वर्णन, विवेचन के पश्चात् हम कह सकते हैं कि वेद में अन्यत्र भी राष्ट्र–रक्षा और दुष्टों के दमन, दलन के उपायों की चर्चा मिलती है। किंतु अथर्ववेद का यह 'भूमि/पृथिवी सूक्त हमें अपने राष्ट्र की सुरक्षा, विकास, सम्पन्नता, सुख शांति आदि के साधन, उपाय, तरीके अपने 63 मंत्रों में विस्तारपूर्वक बतलाता है। राष्ट्र के कर्णधारों को ईश्वर सद्बुद्धि दे कि वे वैदिक–पथ का अनुगमन करें और प्रजाजनों में भी जागरूकता, राष्ट्रप्रेम, नैतिक साहस उत्पन्न हो जिससे वे शासकों को विवश कर दें कि वे देश का हित सोचें, प्रजा की भलाई करें, दुष्टों का दलन करें और आतंकवाद का मूलोच्छेदन कर सकें–

हमें ध्यान से सुनना चाहिये, जो वेद हमें बतलाता है मातृभूमि का हम लोगों से माँ, बेटे का नाता है। जननी और जन्मभूमि ये दोनों स्वर्ग से बढ़कर हैं, आनंदमयी गोद दोनों की संतानों–हित सुखकर हैं। जो भी इन पर गलत नीयत से वार करें, प्रहार करें कर्त्तव्य हमारा बनता है उन दुष्टों का संहार करें। 'शठे शाठ्यं समाचरेत' वैदिक–नीति यह कहती है इस पर अमल करे जो "भूमि" वह सदा सुरक्षित रहती है।

जवाहर नगर, पटियाला चौक
जीन्द, हरियाणा–126102
मो. 09416294347

सत्यार्थप्रकाश का आद्य संस्करण: एक परिचय

(1875 में प्रकाशित)

● डॉ. भवानीलाल भारतीय

स्वामी दयानन्द के धार्मिक, सामाजिक तथा शास्त्र विषयक विचारों को लेखबद्ध करने का आग्रह मुरादाबाद वास्तव्य, डिप्टी कलेक्टर पद पर स्थापित, माथुर चतुर्वेदी कुलोत्पन्न, राजा उपाधिकारी जयकृष्णदास ने स्वामी जी से किया था। तब तक महाराज के दो–तीन ग्रन्थ (सन्ध्या, भागवत खण्डन तथा अद्वैतमत खण्डन) तो छपे थे तथापि हिन्दी भाषा पर उनका समुचित अधिकार नहीं हो पाया था। राजा साहब के परामर्शानुसार जब सत्यार्थप्रकाश लेखन का निश्चय हुआ तो एक महाराष्ट्रीय पण्डित चन्द्रशेखर की सेवाएं स्वामी जी को दी गईं। स्वामीजी ने स्वयं विषय–विभाजन, अध्याय क्रम आदि का निश्चय किया और अपने विचारों को लेखबद्ध उक्त पण्डित से करवाया। अन्ततः यह ग्रन्थ काशी के स्टार प्रेस से हरिवंशलाल के प्रबंध से छप गया। इसके प्रकाशनाधिकार उक्त राजा जी को ही थे।

मूल ग्रन्थ में चौदह अध्याय थे, जिन्हें स्वामी जी ने समुल्लास (मन को उल्लासपूर्ण करने वाले) नाम दिया था। किन्तु जब पुस्तक छप कर पाठकों के हाथ में आई तो पता चला कि इसमें मात्र बारह समुल्लास ही हैं। लेखक ने मूल ग्रन्थ का त्रयोदश समुल्लास यवन मत विषयक तथा चौदहवां गोरण्ड (ईसाई) मत विषयक स्वमन्तव्यामन्तव्य समन्वित लिखा था, किन्तु किसी कारणवश ये दो समुल्लास (तेरहवां तथा चौदहवां) 1875 में प्रकाशित इस ग्रन्थ में नहीं आ सके। इसके दो कारण अनुमित किये गये हैं– 1. इस ग्रन्थ के प्रकाशन के सर्वाधिकार राजा साहब के पास थे। इसलिए सम्भवतः शासक समाज को मान्य ईसाई मत पर आपेक्षात्मक अध्याय छपाना उन्होंने उचित नहीं समझा। इस्लाम की आलोचना भी सम्भवतः उन्हें अभीष्ट नहीं थी। दूसरा कारण शीघ्रता के कारण ये अंश नहीं छपे हों। छापने में शीघ्रता की बात खुद राजाजी ने अपने आरम्भिक वक्तव्य में की है।

यह संस्करण छप तो गया, किन्तु इसमें पौराणिक लेखक की धूर्तता या अन्य किसी कारणवश दो प्रकरण ऐसे छप गये जो ऋषि दयानन्द की मान्यता के सर्वथा प्रतिकूल थे–

1. यज्ञों में पशुबध का विधान, 2. मृत पितरों का श्राद्ध व तर्पण

ऋषि दयानन्द के जीवन के जागरुक पाठक यह जानते हैं कि महाराज ने उपर्युक्त विचारों का सदा खण्डन किया था। वे न तो याज्ञिक हिंसा के अनुमोदक थे और न मृतकों के श्राद्ध–तर्पण के। संस्कारविधि की एक पाद टिप्पणी को देखें–यहां उन्होंने उन सब सूत्र ग्रन्थों तथा कर्मकाण्ड विधायक कथित शास्त्रों को out right reject (प्रथम दृष्ट्या निषिद्ध) किया है, जो यज्ञों में पशुमांस का विधान करते हैं। उन्होंने पंचयज्ञों के विधान में तृतीय पितृयज्ञ की विधि लिखते समय जीवित माता–पिता आदि पितर जनों की सेवासुश्रूषा को ही श्राद्ध तथा तर्पण (तृप्तिदायक कृत्य) बताया है। संस्कार विधि तथा पंचमहायज्ञ विधि में ऋषि के अभीष्ट मन्तव्यों को देखा जा सकता है। जब किसी पाठक ने इन आपत्तिजनक अंशों का जिक्र किया तो ऋषि जी को वस्तुस्थिति का ज्ञान हुआ और उन्होंने एक सार्वजनिक विज्ञप्ति छपाकर सत्यार्थप्रकाश के इस संस्करण में आई इन अनार्ष मान्यताओं को स्वमत के प्रतिकूल धूर्तचेष्टित बताया। (द्रष्टव्य महर्षि दयानन्द का पत्र व्यवहार)

स्वामी जी ने अब मन बनाया कि अपने इस प्रमुख सिद्धांत ग्रन्थ को आद्योपान्त संशोधित कर इसका पुनर्लेखन किया जाना उचित है। आपत्तियों के स्वर जैन मत वालों की ओर से भी उठ रहे थे। गुजरांवाला (पाकिस्तान) वासी ठाकुरदास मूलराज भाभड़ा (जैन मूर्तिपूजक सम्प्रदायानुयायी) ने आपत्ति उठाई कि बारहवें समुल्लास में लिखी जैन मत समीक्षा उनके मान्य सम्प्रदाय ग्रन्थों पर आधारित नहीं है। उसने तो स्वामी जी के लेखन को असत्य ठहराते हुए उन्हें कोर्ट में घसीटने तक की धमकी भी दी थी। इस विवाद को रुकवाने के लिए स्वामीजी ने आपत्तिकर्ता का यह कर समाधान करना चाहा कि यदि अभी विवेचनों में कोई भूल हुई है तो पारस्परिक विचार विमर्श के पश्चात् उसका निदान हो सकेगा। तथापि उन्होंने स्वयं अनुभव किया था कि जैन लोग अपने मत विषयक ग्रन्थों को किसी गैर जैन को दिखाते तक नहीं हैं। इस स्थिति में उनका विवेचन उन्हीं ग्रन्थों पर आधारित होगा जो उन्हें मिले थे। जागरुक पाठक यह जानते हैं कि आगे जब स्वामी जी ने इस ग्रन्थ का आमूलचूल संशोधन या पुनर्लेखन किया तो जैनमत विषयक कई ग्रन्थ उन्हें बम्बई आर्यसमाज के मंत्री सेवकलाल कृष्णदास ने उपलब्ध कराये थे। इन जैन ग्रन्थों की सूची तथा प्राप्त कराने वाले सेवकलाल कृष्णदास का उल्लेख उन्होंने वर्तमान संस्करण की भूमिका में किया है।

इस पृष्ठभूमि को ध्यान में रखें तो हम निम्न निष्कर्ष पर पहुंचेंगे–राजा जयकृष्णदास द्वारा प्रकाशित सत्यार्थप्रकाश में वे पांच श्लोक नहीं छपे जो मूल पाण्डुलिपि में ग्रन्थारम्भ में थे। ये श्लोक हमारे द्वारा आलोचित इस ग्रन्थ में पृष्ठ दस पर हैं–दयाया आनन्दो विलसति, सत्यार्थप्रकाशाय, विशेष भागीह, न ततः फलमस्ति तथा धर्मात्मा विजयी–आदि। 1875 में छपे ग्रन्थ में 13वां (इस्लाम विषयक) तथा 14वां (इसाई विषयक) सम्मुलास नहीं थे, जो वर्तमान उक्त संस्करण (2012 ई.) में है। इस संस्करण में (14वें के अन्त में) लेखक ने जो अपना संक्षिप्त आत्म वृत्तान्त लिखा वह महत्वपूर्ण है–इसका पाठ है–मैंने (दयानन्द ने) अपने घर में कुछ वेद पाठ का और विद्या भी पढ़ी। फिर नर्मदा तट पर दर्शनशास्त्रों को पढ़ा। फिर मथुरा में श्री विरजानन्द सरस्वती दण्डीजी से पूर्ण व्याकणादिक विद्याभ्यास किया जो कि बड़े विद्वान थे। इनके पास रहके सब शंका समाधान किये। फिर मथुरा से आगरा नगर में दो वर्ष तक स्थिति की (कई)। वहां ऋषि मुनियों के सनातन पुस्तक और नवीन पुस्तक भी बहुत मिले, उनको विचारा, फिर ग्वालेर (ग्वालियर) में स्थिति की (किई)। वहां जो–जो पुस्तक मिला उनका विचार किया। जहां–जहां मुझे शंका हो जाती थी उनका स्वामीजी (विरजानन्द) से उत्तर यथावत् पाया। फिर पुस्तकों को देख के एकान्त में जाके (चण्डी पर्वत हरिद्वार आदि) विचार किया, अपने हृदय में शंका समाधान किया। सो यह ठीक निश्चय हृदय में भया कि वेद और सनातन ऋषि मुनियों के शास्त्र सत्य हैं क्योंकि इनमें कोई असम्भव वा अयुक्त कथा नहीं है। जो कुछ है उन शास्त्रों में, सो सत्य पदार्थविद्या और सब मनुष्यों के वास्ते हितोपदेश है।

ध्यान रहे कि 1875 में छपी पुस्तक मे न तो उपर्युक्त श्लोक, न तेरहवां, चौदहवां समुल्लास, न स्वमन्तव्य और न उपर्युक्त संक्षिप्त आत्मवृत आ सका था। पं. भगवददत सम्पादित ऋषि के पत्र व्यवहार में अवश्य उपर्युक्त श्लोक तथा यह संक्षिप्त आत्मवृत्त छपे हैं। सम्पादक डॉ. सेवाराम की सूझबूझ के कारण ग्रन्थ में महाराज के आठ वास्तविक चित्र भी दिये गये हैं। ये चित्र इससे पूर्व दीवान बहादुर हरविलास शारदा सम्पादित दयानन्द कामोरेशन वाल्यूम 1933, दयानन्द चित्रावली गोविन्दराम हासानन्द कलकता द्वारा 1925 में प्रकाशित तथा इस समीक्षा के लेखक द्वारा सम्पादित Tributes to Renassiance Rishi Swami Dayanand में छप चुके हैं। यह भी नोट करें कि राजा जयकृष्णदास के गृह में विद्यमान सत्यार्थप्रकाश की पाण्डुलिपि की फोटो कापी परोपकारिणी सभा के यशस्वी मंत्री दीवान बहादुर हरविलास शारदा ने प्राप्त की थी। यह वैदिक यंत्रालय अजमेर में विद्यमान थी। इस ही पाण्डुलिपि को पं. सेवाराम से प्राप्त किया और पं. सेवाराम जी ने इस वर्ष महर्षि दयानन्द सरस्वती के धर्मोपदेश शीर्षक से 636 पृष्ठों के बृहद् ग्रन्थ रूप में छपा दिया है।

अब जब सत्यार्थप्रकाश का यह आद्य संस्करण हमें उपलब्ध है तो शोधकर्मियों या सामान्य पाठकों को क्या करना उचित है। इसमें मेरे निम्न सुझाव हैं–1. आद्य संस्करण के विवेचनीय विषयों तथा इसकी भाषा शैली को लेकर पी.एच.डी. के लिए शोधकार्य किया जाये। 2. आद्य संस्करण तथा प्रचलित संस्करण के विवेचनीय विषयों तथा भाषा शैली की तुलनात्मक समीक्षा शोधार्थी प्रस्तुत करें। 3. पर्याप्त समय हुआ पं. युधिष्ठिर मीमासंक ने इस ग्रन्थ को सम्पादित कर पुनः ग्रन्थाकार प्रकाशित करने का विचार रखा था। उस समय यह धारणा बनी थी कि दोनों संस्करणों के समानान्तर प्रकाशित होने से पाठकों में बुद्धिभेद पैदा हो सकता है। एक अंश में उस कथन में सत्यता थी। तथापि इस आद्य ग्रन्थ के उपयोगी तथा विचारोत्तेजनक अंशों को पुनः ग्रन्थाकार प्रकाशित करने का विचार रखा था। उस समय यह धारणा बनी थी कि दोनों संस्करण ों के समानान्तर प्रकाशित होने से पाठकों में बुद्धिभेद पैदा हो सकता है। एक अंश में उस कथन मे सत्यता थी। तथापि इस आद्य ग्रन्थ के उपयोगी तथा विचारोत्तेजक अंशों को पुनः ग्रन्थाकार प्रकाशित किया जा सकता है। अब इस आद्य संस्करण का संशोधित संस्करण छप गया है तो इसका पूर्णतया भाषा–शैली की दृष्टि से शोध किया जाना आवश्यक है। यह सब तो भविष्य की बातें हैं। तथापि मेरा विचार इसके सभी समुल्लासों में विवेचित विषयों की विशिष्टता को उद्घाटित करने का है। 2. आदिम सत्यार्थप्रकाश और आर्यसमाज के सिद्धान्त–ले. श्रद्धानन्द संन्यासी

प्रकाशक–प्राचीन भारतीय इतिहास शोध परिषद्–119 गुरुकुल गौतमनगर नई दिल्ली 110049 मूल्य 100 रुपये, सम्पादक–विरजानन्द दैवकरणि।

सत्यार्थप्रकाश के आद्य संस्करण को उसके लेखक ने ही आद्योपान्त संशोधित, परिवर्द्धित कर 1883 में प्रकाशित कराने

शेष पृष्ठ 6 पर ☞

आर्य समाज के दस नियम : विश्व शांति का चार्टर

● डॉ. श्रीगोपाल बाहेती

आज पूरा विश्व आतंकवाद की समस्या से ग्रस्त है। पूरी मानवता प्रेम व भाईचारा के व्यवहार को तरस रही है तथा मंगल पर यात्रा करने वाला मानव आज भी हर हाथ को काम और हर पेट की रोटी देने में समर्थ नहीं है।

परमाणु विज्ञान जहां हमारे विकास का साधन बनना चाहिए, जहां गरीबी और भूख से लड़ने का साधन बनना चाहिएँ उससे उल्टा भय और आतंक का कारण बन रहा है। परमाणु शक्ति सम्पन्न राष्ट्र अपना आधिपत्य पूरे विश्व पर जमाना चाहते हैं न कि सबकी उन्नति में अपनी समझते और सबसे प्रीति पूर्वक बर्ताव करते। मानव सभ्य होने की बात करता है, सहिष्णु व धार्मिक होने की बात करता है फिर क्यों आज ये हालात पैदा हो रहे है क्योंकि हमारी शिक्षा चरित्र विहीन, व्यापार नैतिकता विहीन और विज्ञान मानवीयता विहीन हैं। जब मानवीयता, नैतिकता व चरित्र हमारे व्यवहार से परे हो जायेंगे फिर तो आतंक के साये में ही जीना पड़ेगा।

इतना सब होने पर भी हमारे सामने आज भी एक आशा की किरण है जो हमे विश्वशांति के मार्ग पर ले जा सकती हैं और हमारी शिक्षा में चरित्र, व्यापार में नैतिकता और विज्ञान में मानवीयता का समावेश कर सकती है। आवश्यता सिर्फ इस बात की है कि हम सत्य को ग्रहण करने और असत्य को छोड़ने को तत्पर रहें और सत्य बात को अपने व्यवहार का अंग बनायें। आप शायद प्रतीक्षा कर रहे होंगे की ऐसी क्या कसौटी है जो विश्व को शांति का नीडम् बना दे और हम आपस में बंधुत्व भाव से जीयें तो आईये हम विचारें।

युगपुरुष महर्षि दयानन्द जी सरस्वती ने एक सपना देखा था विश्व परिवार का और तदनुसार एक संस्था की स्थापना की जिसका नाम रखा आर्य समाज (अर्थात् श्रेष्ठ व्यक्तियों का समाज) स्वामी जी की सोच थी एक ऐसे समाज का निर्माण जिसमें जाति, भाषा, सम्प्रदाय का विभेद न हो केवल एक सत्य को ही माना जाये। इस की स्थापना कर स्वामी जी ने आर्य समाज के दस नियम हमें प्रदान किए जो हमें व्यक्तिगत व सामाजिक जीवन जीने का रास्ता दिखाते हैं। पहले नियम में स्वामीजी ने सत्य और विद्या का आदि मूल बताया उसके बाद दूसरे नियम में ईश्वर के गुणों का वर्णन कर तीसरे नियम में वेद को सब सत्य विधाओं का पुस्तक बता पढ़ना-पढ़ाना और सुनना सुनाना परम धर्म माना।

स्वामीजी ने चौथे से दसवें नियम तक जो व्यवस्था हमें दी आज पूरी मानवता को उसकी आवश्यकता है। हम इसको हमारे व्यक्तिगत व सामाजिक आचरण में उतारें तभी हम देखेंगे कि समाज में कैसे भाईचारा कायम होता है। भारतीय संस्कृति की मान्यता हैं कि हमने विश्व को बाजार नहीं परिवार माना है और यही ध्येय था नवजागरण के पुरोधा स्वामी दयानन्द जी सरस्वती का। आज हम पूरे विश्वास से उद्घोषणा कर सकते हैं कि अगर विश्व की सरकारें इन नियमों पर चलें तो पूरा विश्व शांतिमय जीवन जीयेगा जहां फिर कह सकेंगे:-

न मे जनपदे स्तेनो, न कदर्यो न मद्यप।
नानाहिताग्निर्नाविद्वान्, न स्वैरी स्वैरिणीकुतः।।

तो आईये हम दृष्टि डाले उन नियमों पर जिन्हें हम विश्व शांति का घोषणा पत्र कह सकते हैं।

(4)सत्य के ग्रहण करने और असत्य के छोड़ने में सर्वदा उद्यत रहना चाहिए।

(5) सब काम धर्मानुसार अर्थात सत्य और असतय को विचार कर करना चाहिये।

(6)संसार का उपकार करना इस समाज का मुख्य उद्देश्य हैं अर्थात् शारीरिक, आत्मिक और सामाजिक उन्नति करना।

(7) सबसे प्रीतिपूर्वक, धर्मानुसार, यथायोग्य वर्तना चाहिए।

(8)अविद्या का नाश और विद्या की वृद्धि करनी चाहिए।

(9)प्रत्येक को अपनी ही उन्नति में सन्तुष्ट न रहना चाहिए, किंतु सबकी उन्नति में अपनी उन्नति समझनी चाहिए।

(10) सब मनुष्यों को सामाजिक सर्वहितकारी नियम पालने में परतंत्र रहना चाहिए और प्रत्येक हितकारी नियम में सब स्वतंत्र रहे।

अब हम विचार करें कि जब सब सत्य विद्या से जो चीज जानी जाये उसका आदि मूल परमेश्वर को मान कर चलेंगे तो False ego को कोई स्थान नही होगा। हम चाहे व्यक्ति, समाज, राष्ट्र या संस्था कहीं भी देखें हनारी आपसी नासमझी में False ego बहुत भारी पड़ता है और हम साथ रहते झगड़ पड़ते हैं। वहीं अगर हम मान लें कि विद्या व सत्य पदार्थों का आदि मूल परमेश्वर है तो हम आपस में जो व्यवहार करेंगे वह होगा प्रीति पूर्वक एवं धर्मानुसार तथा वहां कोई स्थान नहीं होगा आपसी वैमनस्य का। इसी प्रकार जब आप विद्या का आदि मूल परमेश्वर मानेंगे तो सोचेंगे परमेश्वर क्या है? कैसा है? कहाँ है? स्वामी बताते हैं ईश्वर निराकार, सर्वव्यापक, सर्वशक्तिमान, सर्वान्तर्यामी, अजर, अमर, अभय नित्य, पवित्र, न्यायकारी, अजन्मा, अनन्त, निर्विकार और सृष्टिकर्त्ता है ऐसे परमात्मा को मानने में कहा मत भेद होगा। सभी मानते हैं परमात्मा उक्त गुणों से युक्त है कोई भी इससे इतर परमात्मा को कैसे मानेगा अगर हम सत्य के ग्रहण करने और असत्य को छोड़ने को तैयार हैं तो।

आर्य समाज के पहले तीन नियम तो ईश्वर व वेद के सम्बन्ध में हैं पर 4 से 10 तक के नियम हमारे जीवन में व्यवहार कैसा हो दर्शाते हैं। हम आपस में कैसे बर्ताव करें हमारा कर्त्तव्य समाज, राष्ट्र व परिवार के लिए क्या है? और हम आपस में प्रेम व भाईचारे से कैसे रह सकते हैं आईये हम विचार करें।

(4)जब हम सत्य को ग्रहण करने और असत्य को छोड़ने को तैयार रहेंगे। (5) सब काम सत्य और असत्य को विचार कर करेंगे। (3) संसार का उपकार करना (जाति,धर्म भाषा, लिंग, सम्प्रदाय व सीमा से उठकर) हमारा उद्देश्य होगा वह शारीरिक ही नहीं अपितु आत्मिक और सामाजिक भी तब ही मानव जीवन में भाईचारा, प्रेम व आनन्द का प्रवाह होगा। (7) हमारा बर्ताव प्रीतिपूर्वक धर्मानुसार (सत्य,असत्य को विचार कर) एवं यथायोग्य होगा तो कहीं भी हमारे व्यवहार से किसी को कोई ठेस कैसे पहुंचेगी। (8) अविद्या के नाश (चाहे वह धर्म के नाम पर हो अथवा अन्य आडम्बर) को हम तैयार रहें तथा विद्या की वृद्धि में हम हमारा पूरा सामर्थ्य लगा दें। (9) हमें केवल हमारी उन्नति में संतुष्ट नही होना है अपितु सबकी उन्नति में अपनी उन्नति समझनी हैं।

अब आप देखिये ऐसे व्यवहार के बाद कहाँ असमानता होगी और कहां होगा सामाजिक विभेद। अन्त में गुरुवर दयानन्द कहते हैं कि सभी मनुष्य (राजा से रंक), गरीब अमीर, बलवान, कमजोर, सामाजिक नियम पालने में परतंत्र है वहां मुझे यह देखना है कि सामाजिक व्यवस्था मेरे व्यवहार से टूटे नहीं, मेरे व्यवहार से सामने वाले का नुकसान न हो। उसी सीमा तक मुझे स्वतंत्रता है हां मनुष्य स्वयं के लिए हितकारी नियम पालने में स्वतंत्र है। अब आप बताइये कहां होगा आतंक, कहां होगी हिंसा और कहां होगा वर्ग भेद?

मेरा विनम्र निवेदन है विश्व के सभी मत सम्प्रदाय के मान्य धर्मगुरुओं, नेताओं तथा विश्व की समस्त सरकारों तथा संयुक्त राष्ट्र संघ से कि मिल बैठें और विश्व मानव के लिए चार्टर तैयार करें जो हमें विश्व शांति के मार्ग पर ले जाये तथा हम विश्व को अन्याय, अत्याचार व आतंक से मुक्त कर सकें तथा विज्ञान के अविष्कारों का लाभ पूरे विश्व को समान रूप से मिल सके तथा हम कह सकें भारत विश्व शांति का अग्रदूत है।

☞ पृष्ठ 5 का शेष

सत्यार्थप्रकाश का आद्य...

की व्यवस्था कर ली थी। परिणाम यह रहा कि इस संस्करण की ओर बहुत कम लोगों का ध्यान गया। तथापि विरोधियों ने इसमें छपे उन दो प्रकरणों पर हाय तोबा मचाया जिन्हें लेखक (ऋषि दयानन्द) ने ही नकार दिया था तथा धूर्तचेष्टित बताया था। ये थे-याज्ञिक पशु हिंसा तथा मृतक श्राद्ध पौराणिक पक्ष में उन दिनों आर्यसमाज के उग्र आलोचक दो तीन थे- ज्वालाप्रसाद मिश्र मुरादाबादी तथा उनके अनुज बलदेवप्रसाद मिश्र। उधर पंजाब के (वर्तमान हरियाणा में झज्जरवासी) व्याख्यानवाचस्पति कहलाने वाले पं. दीनदयालु शर्मा आर्य सिद्धान्तों पर मीठी छुरी चलाते थे तथा प्रच्छन्न शैली में व्यंग्य प्रहार करते थे। किन्तु अवाच्य वाचन तथा गाली देने में अग्रगण्य थे कानपुर जिले के एक ग्राम के पं. कालूराम शास्त्री। उधर अनूपशहर के पं. अखिलानन्द शर्मा तो जन्मना आर्यसमाजी तथा "दयानन्द दिग्विजय" महाकाव्य आदि अनेक ग्रन्थों के विश्रुत लेखक तथा वैदिक ग्रन्थो के भाष्यकार थे तथापि चंद चांदी के टुकड़ों के मोह जाल में फस कर वे वैदिक कैम्प को छोड़ गये तथा पौराणिक शिविर के मुखर (गाली दान मे निपुण) सेनापति बन कर स्वामी दयानन्द तथा आर्यसमाज के प्रति अश्लील तथा भद्दी भाषा का प्रयोग करने लगे। माधवाचार्य आदि भी इसी वर्ग में आते हैं।

पं. कालूराम ने इस आद्य संस्करण को पुनः छपाया तथा इसके द्वारा यह

शेष पृष्ठ 7 पर ☞

अमर शहीद चौधरी तारा चन्द

● डा. अशोक आर्य

वीर अनुरागी समाज वही होता है जहां वीरों शहीदों को सदा याद किया जावे। आर्य समाज ने न केवल शूरवीर व बलिदानी धर्म प्रेमी ही पैदा किये बल्कि उन्हें उचित सम्मान देते हुए याद भी किया, उनके जीवनों से प्रेरणा भी प्राप्त की। तभी तो आर्य समाज का विस्तार बड़ी तीव्र गति से हुआ। इसी श्रृंखला में हम हमारे शहीद चौ. ताराचन्द जी को आज याद कर रहे हैं

श्रावण बदि 11 सं. 1173 वि. को जिला मेरठ के गांव लूम्बा के जाटों के चौहान गोत्र के चौ. केहरसिंह तथा माता भगवानी देवी के तीन पुत्रों में से तृतीय श्री ताराचन्द जी थे। पिता आठ वर्षीय बालक को माता की गोद में छोड़कर चल बसे। आठ कक्षा तक पढ़े इस बालक पर चाचा महादेव का पूरा प्रभाव था। महादेव जी 115 में एक आर्य संन्यासी के सदुपदेशों से आर्य हुए तथा इन्हीं के प्रभावों से तीनों भाई भी वेद मार्ग के अनुगामी बने। आर्य महाविद्यालय किरठल के भी चाचा जी पोषक थे तथा देश सेवार्थ तीन बार जेल भी गए थे। हैदराबाद सत्याग्रह से कुछ समय पूर्व ही ताराचन्द जी का विवाह परमेश्वरी देवी गांव कुटबा (मुजफरनगर) से हुआ, जो केवल एक बार ही ससुराल गई थीं कि हैदराबाद सत्याग्रह की दुन्दुभि बज उठी।

ताराचन्द जी अपने चचेरे भाई विरजानन्द जी सहित पं. जगदेवसिंह सिद्धान्ति जी के साथ किरठल से चलकर अनेक स्थानों पर प्रचार करते हुए भाग्यनगर तथा फिर शोलापुर पहुंचे। यहां से वरशी होते हुए तुलजापुर के मोर्चे पर जा डटे। मार्ग में मुसलमानों का सामना भी करना पड़ा। यहां पर इस दल ने सत्याग्रह किया। इस दल को उस्मानाबाद जेल भेजा गया किन्तु ताराचन्द जी को औरंगाबाद भेजा गया। बाद में पं. जगदेव जी को भी यहीं लाया गया। जब म. कृष्ण जी पंजाबी वीरों के साथ जय घोष करते हुए इसी जेल में आये तो निजाम पुलिस भी विवश सी हो गई। भारी प्रयास से भी जयनाद बन्द करवा पाने में विफल होने पर सभी वीरों को विभिन्न जेलों में भेजा जाने लगा। तारा चन्द जी को भी हैदराबाद सैन्ट्रल जेल में भेज दिया गया। यहीं पर ही पं. जगदेव जी से उन का अन्तिम मिलन हुआ।

जेल में ताराचन्द जी पर अत्याचार दिन प्रतिदिन बढ़ते जा रहे थे, जिन को वह शांति पूर्वक कर रहे थे। जेल के इन कष्टों से धीरे–धीरे ताराचन्द जी का शरीर शिथिल पड़ने लगा। इसी मध्य सत्याग्रहियों की बाढ से तंग आकर निजाम ने सन्धि की याचना की। अति कृशता की हालत में तारा चन्द जी को 18 अगस्त 1939 को जेल की सींखचों से मुक्त कर दिया गया जबकि शरीर से जीवन शक्ति प्रायः समाप्त हो चुकी थी। नागपुर में अति शिथिल अवस्था में डा. परांजपे ने उन्हें गाड़ी से उतार लिया। यहां हुए उपचार भी उन्हें ठीक न कर सके। 2 सितम्बर 1939 को ताराचन्द जी गायत्री के माध्यम से प्रभु का चिन्तन कर रहे थे कि अकस्मात् चाचा रामचन्द्र जी उनके पास जा पहुंचे। इन्ही चाचा के अनुरूप ही तो ताराचन्द जी ने अपने आप को ढाला था। अतः उनके दर्शन से ताराचन्द जी में एकबार नई चेतना जाग उठी। बेटे ने एक बार चाचा जी को हाथ जोड़कर नमन किया और फिर उन्हीं की ही गोद में ऐसे लुढ़के कि कभी उठ न सके।

इस प्रकार यह धर्मवीर न तो अपने गांव ही आ पाया, न अपनी पत्नि को ही पुनः मिल पाया, जबकि इस वियोग को सहने की शक्ति उसके प्रेमियों ने किसी प्रकार प्राप्त की। शहीद ताराचन्द जी की स्मृति में किरठल के आर्य महाविद्यालय में ''वीर ताराचन्द बलिदान भवन''बनाया गया है, जो आज भी उनके तप व त्याग की गाथा सुना रहा है।

104 शिप्रा अप्राटमेंन्ट, कोशाम्बी,
गाजियाबाद कुटीर

☞ *पृष्ठ 6 का शेष*

सत्यार्थप्रकाश का आद्य...

बताना चाहा कि ''स्वामी दयानन्द का मूल ग्रन्थ तो 1857 में छपा यही संस्करण है तथा इसमें उन्होंने जिस याज्ञिक पशु हिंसा तथा मृतक श्राद्ध का विषय लिखा है, वही उनका मूल अभिप्रेत था। दयानन्द के निधन के पश्चात् आर्यसमाजियों ने एक नया सत्यार्थप्रकाश लिखा तथा वे इसे ही दयानन्द लिखित ग्रन्थ प्रचारित कर रहे हैं।'' उसका सारा जोर इस बात पर रहा कि यह 1875 में छपा संस्करण ही मूल सत्यार्थप्रकाश है तथा 1884 में प्रकाशित इसका संस्करण जाल ग्रन्थ है, जिसे स्वामी दयानन्द की मृत्यु के पश्चात् आर्यों ने अपनी मनमर्जी से लिख डाला है। वस्तुतः मौलवी अब्दुल गफूर से शुद्ध होकर पं. धर्मपाल बने (विस्तृत परिचय के लिए देखें–आर्य लेखक कोश पृ–121) इस व्यक्ति ने 1875 के सत्यार्थप्रकाश का उर्दू अनुवाद कर लाहौर से छपाया था। इससे पं. कालूराम को उत्तेजना मिली तथा उन्होंने इसे पुनः प्रकाशित कर आर्यसमाज को पराजित करने की सोची थी। जब परोपकारिणी सभा के एक अधिवेशन में कालूराम द्वारा प्रकाशित इस संस्करण पर विचार किया गया तो एक प्रस्ताव यह भी आया कि इसे सरकार द्वारा प्रतिबंधित कराया जाये, क्योंकि इसके प्रकाशक पं. कालूराम का आशय इसके द्वारा आर्यसमाज को बदनाम करना है तथा यह प्रचारित करना है कि इसके लेखक (दयानन्द) याज्ञिक हिंसा तथा मृतक श्राद्ध के समर्थक थे। पं. मुन्शीराम जो इस सभा के सदस्य थे, का मत कुछ भिन्न था। उनका कहना था कि इस अपूर्व ग्रन्थ का पूर्णरूप से संशोधित संस्करण परोपकारिणी सभा या सार्वदेशिक सभा की ओर से निकाला जाये। उन्होंने इस चर्चा के समय गुरुगुल कांगड़ी के पुस्तकालय से इस ग्रन्थ को मंगाया और पुनः पढ़ा। उन्होंने पं. कालूराम की युक्तियों का विस्तृत खण्डन किया तथा आद्य संस्करण की विशेषताओं को विस्तार से निरुपित किया। इतना ही नहीं उन्होंने इस अलभ्य दुर्लभ संस्करण से लेकर अनेक उपयोगी, मार्मिक तथा प्रेरक संदर्भ अपने ग्रन्थ ''आदिम सत्यार्थप्रकाश और आर्यसमाज के सिद्धान्त'' में दिये, ताकि आज का पाठक भी इस ग्रंथ की महत्ता से परिचित हो सके। उनका विचार समग्र ग्रन्थ को नकारता उचित नहीं है। उन्होंने इस ग्रन्थ की उपयोगिता को उजागर करने के लिए आदिम सत्यार्थप्रकाश के अनेक उपयोगी विषयों को ''आदिम सत्यार्थप्रकाश के चुने हुए रत्न'' शीर्षक से उपर्युक्त ग्रन्थ में संकलित किया है।

तथापि स्वामी श्रद्धानन्द का यह ग्रन्थ तो भावी कार्य के लिए निर्देश मात्र है। मैंने स्वयं वर्षों पूर्व पं. युधिष्ठिर जी के संग्रह से लेकर पं. कालूराम द्वारा प्रकाशित इस ग्रन्थ को आद्योपान्त पढ़ा। पुनः ''दयानन्द सिद्धान्त मुक्तावली'' में इसके विशिष्ट एवं उपयोगी उद्धकरणों का संग्रह किया।

निश्चय की स्वामी श्रद्धानन्द द्वारा लिखित इस ग्रन्थ से इस आद्य संस्करण के विषय में पूर्ण जानकारी पाठकों को मिलेगी। केवल इसके ग्यारहवें समुल्लास पर ही दृष्टिगत करें तो उसमें सोमनाथ मंदिर पर महमूद गजनवी की चढ़ाई, आबूपर्वत पर राजपूत जाति के प्रवर्त्तन हेतु किये यज्ञ, यूरोपीय जातियों के कतिपय अच्छे आचरण, ब्रिटिश शासन से हुई हानियों तथा कतिपय लाभों का विचार आदि ऐसे प्रकरण इसमें आये हैं जो वर्तमान संस्करण में नहीं है। नमक के उत्पादन पर टैक्स लगाना तथा ऐसे प्रकरण इसमें आये हैं जो वर्तमान संस्करण में नहीं हैं। नमक के उत्पादन पर टैक्स लगाना तथा देश की आर्थिक दशा को दुर्बल बनाने के सरकारी आदेशों की आलोचना ऋषि की दूरदर्शिता तथा उनके चिन्तन की क्रान्तदर्शिता को उद्घाटित करने वाले इस ग्रन्थ का पुनः प्रकाशन सत्यार्थप्रकाश विषयक साहित्य में एक बहुमूल्य वृद्धि है। एतदर्थ सम्पादक तथा दानदाता सज्जन धन्यवाद के पात्र हैं।

3. वेद और आर्यसमाज–ले. श्रद्धानन्द संन्यासी (मुन्शीराम जिज्ञासु)

प्रथम प्रकाशन–आर्य धर्मग्रन्थ माला के अन्तर्गत 10 नवम्बर 1916 पंचम पुष्प।

द्वितीय प्रकाशन–आर्यमर्यादा साप्ताहिक। तृतीय प्रकाशन–उपर्युक्त ग्रन्थ में समाविष्ट।

महात्मा मुन्शीराम ने (1916–17 के) वर्ष में आर्य धर्मग्रन्थमाला नाम से शोधपरक लघु पुस्तकें लिखीं। ऐसी एक पुस्तक ईसाई पक्षपात और आर्यसमाज में उन्होंने पादरी जे. एन. फर्कुहर के ग्रन्थ माडर्न रिलिजियस मूवमेंटस इन इण्डिया में दिये गये आर्यसमाज विषयक पक्षपात पूर्ण विवरण का सार प्रस्तुत किया। आलोच्य पुस्तक में लेखक ने फ्रैंच लेखक जैकालियट तथा सर विलियम जोन्स आदि पाश्चात्यों के वेद विषयक मतों को देने के पश्चात दयानन्द के वेदवाद को पुष्ट किया है। इस प्रकरण में उन्होंने यह भी स्पष्ट किया है कि किस प्रकार स्वामी दयानन्द के अल्प अधीत ज्वालादत्त, भीमसेन आदि शिष्य–लेखक वर्ग ने उनके ग्रन्थों में जानबूझ कर भूलें एवं त्रुटियाँ की हैं। स्वामी जी के वेद भाष्य का संस्कृत अंश तो ऋषि कृत है जब कि इसका भाषानुवाद इन्हीं पण्डितों का किया है जो अस्पष्ट, दुर्बोध तथा अस्त व्यस्त है। कतिपय सिद्धान्त विरुद्ध बातों को ऋषि कथन में प्रवेश दिलाना भी इन्हीं पौराणिक मानस के पण्डितों की कर्तूत है। इस प्रसंग में म. मुन्शीराम जी ने वेदांगप्रकाश, संस्कृत वाक्यप्रबोध, यहां तक कि सत्यार्थप्रकाश में भी प्रक्षिप्त किये जाने के दूषित प्रयत्नों को स्वामी जी के समकालीन मुन्शी समर्थनदान तथा कालान्तर में वैदिक यन्त्रालय के प्रबंधक भक्त रैमल के साक्ष्य से उपर्युक्त तथ्यों को पुष्ट किया है। मेरी निजी राय है कि आर्य धर्म ग्रन्थमाला के अन्य लघु ग्रन्थों को पुनः प्रकाशित किया जाना उचित होगा।

3/5 शंकर कालोनी, श्री गंगानगर

गड़बड़ घोटाला

● दिलचस्प

अमीर–गरीब, चोली–दामन, नेता–कुर्सी, मंत्री–चमचे या स्त्री पुरुष शब्दों का जिस तरह साथ रहा है, उसी प्रकार गड़बड़–घोटाला भी सहोदर थे। तकरार के एक दौर में गड़बड़ एवं घोटाला अलग अलग हो गए। शब्दकोश के पंडितों के सामने परेशानी उपस्थित हुई। भ्रष्टाचार, गबन, घूस, रिश्वत आदि गड़बड़ एवं घोटाला की टहनी हैं तो दक्षिणा, टिप, सुविधा शुल्क, चन्दा आदि इसके फल हैं। अगुंलियों से नाखून अलग नहीं किए जा सकते, उसी प्रकार घोटाला से गड़बड़ या गड़बड़ से घोटाला अलग नहीं किए जा सकते, फिर शब्दकोश की सार्थकता कैसे बनाई रखी जाए, इसको लेकर समस्या उत्पन्न हो गई है।

किसी समय घोटाला की टहनी 'भ्रष्टाचार' एक बहुत वजनी शब्द था जो अपने आप में कई प्रकार के षड्यंत्रों को छुपाए रखता था, मगर जब से क्वाटर कोठियों में, गऊशाला गोदामों में या फलसा फार्म हाउसों में तब्दील होने लगे, तब से भ्रष्टाचार शिष्टाचार में तब्दील हो गया। फलस्वरूप बिना कोई दवा दारू या योग के यह वजनी शब्द हल्का और सामान्य हो गया। अपनी ही टहनी भ्रष्टाचार के वजनी से हल्के रूप में होने की तौहीन देखकर घोटाला ने जता दिया कि संतुष्टि के लिए भले ही मेरे एक अंग विशेष को हल्का मान लिया गया हो, अन्यथा भ्रष्टाचार रूप में मुझे घटित करने पर वजन बढ़ता ही है।

'घोटा' वैसे भी वजनी शब्द है और उसे धारण करने वाला पहलवान या बजरंग बली भी बिना किसी 'कानून' यानी 'ला' (LAW) के भी घोटा लाने के लिए 'घोटा–ला' बोला जाता है तब यह "घोटाला" बन जाता है। हालांकि इसकी किस्में और किस्से विविध हैं। बहरहाल विशुद्ध घोटाला पर ही आया जाए। शब्द शिल्पियों व पारखियों ने 'स्वर्गधाम' में तो "गधा" तलाश लिया, मगर गड़बड़ या घोटाला की छंटाई या तराशी का काम न कर पाए। आगे बढ़ने से पूर्व 'स्वर्गधाम' के बारे में भी बता दिया जाए, जिसका अभी जिक्र किया है।

कूड़ा करकट कीच गधा है
निपट तिरस्कर नीच गधा है
शब्द शिल्पी ने शब्द तराशा
तो देखा स्वर्गधाम बीच गधा है।

काव्य की इन पंक्तियों के द्वारा समझ में कुछ कमी रही हो तो इसका और अधिक खुलासा कर दिया जाए। स्वर्गधाम को अगर आगे–पीछे से घिसाई करके या तराश के अथवा टुकड़ों में पढ़ा जाए तो गधा स्पष्ट नजर आयेगा। यानि कि "स्वर गधा म" से माजरा समझ में आ जायेगा।

स्वर्गधाम की तरह गड़बड़ घोटाला की छंटाई, तराशी या टुकडों में तोड़ने का काम न हो पाया तो शब्दकारों ने एक पार्टी विशेष के दो टुकडों में बंट जाने पर भी उनके नाम एक जैसे रह जाने की तरह गड़बड़ का मतलब घोटाला और घोटालों का मतलब गड़बड़ कर दिया। इतना फर्क जरूर रखा कि नाम विशेष के पूर्व श्री या सुश्री आने की तरह घोटाला तभी जाना जायेगा, जब इस नाम के पहले गड़बड़ शब्द जुड़ेगा। शब्दकारों के आगे गड़बड़ एवं घोटाला की तकरार कोई मायना नहीं रख पाई। वस्तुत घोटाला में गड़बड़ समाहित हो गया।

यह तो रही घोटाला नामकरण की प्रारम्भिक स्थिति। अब इसकी किस्मों के बारे में कविता के माध्यम से जान लिया जाए।

मुंबई या अन्यत्र कहीं, जब एक मंच पर आ जाए
शरद, ठाकरे और छगन, समझो गड़बड़ घोटाला है।
रेल और बस सफर वाला, जब प्लेनों से छूने लगे
पहाड़ अंतरिक्ष और गगन, समझो गड़बड़ घोटाला है।
नए नए उपकरणों से, जब छन छन छनकर आने लगे
धूप चांदनी और पवन, समझो गड़बड़ घोटाला है।
धर्म–कर्म के उपदेशक, जब बिन भए अपनाने लगे
सुरा सुंदरी और मटन, समझो गड़बड़ घोटाला है।
बिना अतिरिक्त साधन के, जब वेतन से बनने लगे
कोठी बंगला और भवन, समझो गड़बड़ घोटाला है।
आधुनिकता के रंगों में, जब एक समान हो जाए
भाभी, बीबी, और बहन, समझो गड़बड़ घोटाला है।
दाल भात खाते खाते, जब लगने लगे पराया
जनपद राज्य और वतन, समझो गड़बड़ घोटाला है।
विकास प्रगति के युग में, जब घोटाला से जुड़े नहीं
नेता अफसर और भजन, समझो गड़बड़ घोटाला है।
आपद सहायता में भी, जब दुखियों के खिले नहीं
खोली जंगला और चमन, समझो गड़बड़ घोटाला है।
तहलका तहकीकात में, जब रक्षा सौदों में घिरे
जार्ज, जेटली और लखन, समझो गड़बड़ घोटाला है।
अखबारों की खबरों में, जब दिनों तक हो न उजागर
घूंस घोटाला और गबन, समझो गड़बड़ घोटाला है।
नियोजन बाद भी "दिलचस्प, जब मृदु किलकारी गूंजे
गोदी पलना और सपन, समझो गड़बड़ घोटाला है।

गड़बड़ घोटाला की एक 'डजन' किस्में जानने के पश्चात् अब इसे आज के संदर्भों में भी जान लिया जाए। शासकीय कर्मचारी या सामान्य व्यापारी जब घोटाला करते हैं तो वे नौकरी से पृथक् कर दिए जाते हैं या व्यवसाय को ताला लग जाता है। 'सुविधा शुल्क' न देने पर भी सजा हो जाती है, मगर जब उच्चाधिकारी, नेता, मिनिस्टर या बड़े व्यक्ति घोटाला करते हैं और वह प्रकट हो जाता है तब वे झट से अपने पद से त्यागपत्र देने की घोषणा कर देते हैं और दर्द–दिल की शिकायत के साथ हास्पीटल में भर्ती हो जाते हैं। घोटाला की गई राशि हज्म हो जाती है। सजा होने की बात ही नहीं उठती। दिखावा के लिए एक–दो सप्ताह "तिहाड़" जैसी प्रमुख जेलों में आराम के लिए चले जाते हैं अन्यथा हास्पीटल तो आरामगाह है ही। किसी प्रकार का दण्ड पाने की बजाये घोटालेबाज बहुचर्चित हो जाते हैं?

मौसम बदलने के साथ मच्छरों का प्रकोप होता है, खड़ी फसल के पश्चात् टिड्डी दल का धावा होता है, लूटपाट और दंगा हो जाने के काफी समय पश्चात् पुलिस का प्रवेश होता है अथवा फिल्म में हीरो की माँ, बहन, बीबी, प्रेमिका, पिता या भाई की हत्या करने के वक्त, हत्यारों से मुकाबला करने के लिए जंजीरें या जेल तोड़कर, हीरो का आगमन होता है, उसी भांति सी.बी.आई. से मुकाबला करने के लिए आजकल घोटालों का मौसम चल रहा है। यह मौसम तीन दशकों से बम्पर रूप में लगातार बरकरार है। इस मौसम में कमी के लिए किए गए घोटाले एक साथ अंकुरित हो आते हैं, अंकुरित हो रहे है। तीन दशकों पूर्व तो यदा कदा ही इसका मौसम बनता था, मगर अब तो घोटालों की श्रृंखला बनती जा रही हैं। अखबारों में किस्म किस्म के एक से बढ़कर एक घोटाले प्रकट हो रहे हैं।

एक समय था जब घोटाला शब्द उपेक्षा और तिरस्कार का प्रतीक था, पर आज घोटाले का सर्वत्र सम्मान और अभिनन्दन होता है। युग परिवर्तन के साथ साथ घोटाले ने पर्याप्त प्रगति की है। कल तक घोटाला डर के मारे बौना–सा बना था, मगर आज सर्वत्र लम्बा और चर्चित है।

समाचार पत्र और अन्य माध्यम जिस तरह से घोटाले का 'कवरेज' करते हैं वैसा उत्साह वे अन्य घटनाओं में प्रदर्शित नहीं करते। पहले घोटाले साधारण व्यक्ति किया करते थे, मगर अब बड़े बड़े महारथी घोटाला करते हैं, "जितना बड़ा जूता होगा, उतनी ही पालिस होगी" की तरह जितना बड़ा घोटाला होगा, उसी अनुपात में उसे यश और ख्याति मिलेगी।

शेयर मार्किट में जिस प्रकार कोई संस्थान सूचकांकों या भावों में ऊपर होता है, उसी प्रकार घोटाला आज 'टॉप' (शिखर) पर है। रुपये की कीमत गिर गई मगर घोटाले की कीमत आसमान पर है। हालांकि रुपये की कीमत घोटाला के कारण ही कम हुई है। घोटाला महंगाई से भी ऊंचाई पर है। लाभ की दृष्टि से आज घोटाला करना उपयुक्त है। अन्य क्षेत्रों में श्रम और संघर्ष के पश्चात् सफलता मिलती है मगर घोटाला तो सफलता की गारंटी है। इसका उदय ही लाभ देने वाला होता है। बस, अपना जमीर बेचना पड़ता है और कुछ सामान्य तिकड़म करने होते है।

घोटाला एक ऐसा चमत्कार है जो प्रकट होते ही घोटाला करने वाले को एक ही दिन में ख्याति के शिखर पर पहुंचा देता है। जिस दिन कोई घोटाला विधिवत् प्रकट होता है, घोटाला का नायक, बिना गिनिस बुक में नाम आए ही रेडियो, दूरदर्शन व समाचार–पत्रों की प्रथम पंक्तियों मे छा जाता है। एक ही दिन में देश विदेश के पत्रकारों, समाचार एजेंसियों और संचार माध्यमों का वह सर्वाधिक प्रिय पात्र बन जाता है। प्रमुख पत्र–पत्रिकाओं में उनके जीवन विवरण, उपलब्धियों और वर्तमान धन सम्पदा का इतना रोचक और आकर्षक विवरण छपता है कि पढ़ने वाला भी ईर्ष्या करने लग जाता है। दिनों तक घोटाले और घोटाला नायक की चर्चा चलती है। घोटाले पर आनन–फानन में फिल्म तक बन जाती है। आज तो घोटाला जगत् की स्थिति यह है कि घोटाला बाज एक ही दिन में 'हवाला' डायरी के साथ विश्व प्रसिद्ध बन जाता है। घोटाला विवरण पढ़ने सुनने वाला भी घोटाला जनक से ईर्ष्या करने लग जाता है और कामना करता है–

काश, किसी डायरी में, अपना भी नाम होता
जेबें भरी सी रहती, तिजोरी में दाम होता।
कोठी बंगले होटल, फार्म हाउस बन जाते
अवैध चीजों के लिए, अलग से गोदाम होता।
बड़े बड़े नेता लोग, झुक झुक सलामी देते
एक आवाज के पीछे, सारा आवाम होता।
आए दिन अखबारों में, मुख्य शीर्षक से छपते
भोली जनता के नाम, नवीन पैगाम होता।
चरित्र इज्जत नैतिकता, आदि की बातें करते
हलक में मदिरा–घूंट, अधरों पर राम होता।
आपसी मनमुटाव में, कांड सरेआम होता
एक झटका–सा लगता, खाना हराम होता।
होटलों–बाजारों में डायरी चर्चा चलती
टीवी पर फोटो घर में, क्षणिक कोहराम होता।
कल्पना बहुत है लम्बी, संक्षेप में ही बताएँ
घपलों पर जांच आयोग, अंतिम मुकाम होता।
न्यायिक जांच के तहत, तिहाड़ में धाम होता
इस बहाने 'दिलचस्प', कुछ दिन आराम होता।
अपयश के महीनों बाद, बात ठंडी पड़ जाती
पीढ़ियों के वैभव का, पक्का इन्तजाम होता।

चूरू–331001 राजस्थान

ऋषि दयानन्द का राष्ट्रवाद

● डॉ. सहदेव वर्मा

रा राजनीति को धर्म से पृथक करने का ऋषि दयानन्द ने प्रबल विरोध किया है। ऋषि ने सत्यार्थ प्रकाश छठा समुल्लास तो विशेष रूप से राजनीति पर ही लिखा है। जब कि अनेक धर्म गुरुओं और धमाचार्यों ने तो राज्य व्यवस्था के सम्बन्ध में मौन रहना ही उचित समझा। मं. गाँधी भी राजनीति में धार्मिक भावना के समावेश के पक्षपाती थे। अमृतसर के ऐतिहासिक अधिवेशन के स्वागताध्यक्ष के लिये स्वामी श्रद्धानन्द का नाम प्रस्तावित करते हुए गाँधी जी ने लिखा था– 'भाई साहब, मेरा विश्वास है कि जब तक हम लोग धार्मिक भावना से राजनीतिक क्षेत्र में प्रवेश नहीं करते तब तक भारत का सच्चा और वास्तविक अभ्युदय नहीं हो सकता।'

ऋषि दयानन्द ने एक तंत्रवाद का खण्डन और बहुमत द्वारा संचालित प्रजातंत्र का समर्थन किया है। विदेशी राज्य के तो स्वामी जी प्रबल विरोधी थे ही, आंशिक स्वतंत्रता भी उन्हें अभिप्रेत नहीं थी। कहा जाता है कि भारत के तत्कालीन वाइस राय नार्थ बुक ने स्वामी जी से एक बार विक्टोरिया शासन के समर्थन में कुछ शब्द अपने प्रवचनों में कहने का अनुरोध किया तो ऋषि ने स्पष्ट रूप से उत्तर दिया कि 'मैं तो अपने देश में अपने राज्य का ही प्रबल समर्थक हूँ– मैं विदेशी शासन को किसी भी कीमत पर देश के लिए अभिशाप समझता हूँ। मैं अंग्रेजी राज्य के समर्थन की बात तो कभी सोच भी नहीं सकता।' इस कथन से उनके स्वदेश प्रेम की प्रबल भावना झलकती है।

ऋषि दयानन्द के अनेक लेखों से यह बात सिद्ध होती है कि आज से लगभग 140 वर्ष पूर्व उन्होंने स्वराज्य, साम्राज्य तथा अखण्ड सार्वभौम चक्रवर्ती साम्राज्य की चर्चा अपने लेखों में की है। उस समय तक इस देश में किसी के दिमाग में 'स्वराज्य' का विचार भी पैदा नहीं हुआ था। दादा भाई नौरोजी ने सन् 1906 में 'स्वराज्य' शब्द का प्रयोग किया। लोकमान्य तिलक ने 1916 में कांग्रेस के मंच से 'स्वराज्य' हमारा जन्म सिद्ध अधिकार है' का नारा दिया, और 1929 में लाहौर कांग्रेस ने पूर्ण स्वराज्य की घोषणा कर उसे अपने कार्यक्रम में स्थान दिया। लेकिन स्वामी दयानन्द ने जिस स्वराज्य की चर्चा की थी उसका स्वरूप स्पष्ट शब्दों में यह था– कि 'कोई कितना ही करे, परन्तु जो स्वदेशीय राज्य होता है वही सर्वोत्तम होता है। अथवा मत मतान्तर से रहित अपने और पराये का पक्षपात शून्य, प्रजा पर माता पिता के समान कृपा न्याय एवं दया के साथ विदेशियों का राज्य भी पूर्ण सुखदायक नहीं है।'

विशेष बात यह है, कि ऋषि की इस भावना के पीछे सब कुछ विशुद्ध भारतीय था। विदेशी प्रभाव से सर्वथा रहित। उन्होंने राष्ट्रवाद की यह भावना वेद की ऋचाओं से, स्मृति ग्रन्थों से, ऋषि मुनियों के आप्त वचनों से ग्रहण की थी। भारत में तो यह भावना घर कर चुकी थी, जिसे शिक्षित समाज भी आँखें मूंद कर मान्यता प्रदान कर चुका था, कि इस देश में पैदा हुई राष्ट्रीय भावना, राष्ट्रीय एकता, स्वदेश भक्ति और राजनीतिक आकाँक्षा ब्रिटिश शासन की देन है। जब कि यह सर्व विदित तथ्य है, कि ऋषि दयानन्द अंग्रेजी से सर्वथा अनभिज्ञ थे। सब जानते और मानते हैं कि उनकी अगाध विद्वत्ता का आधार संस्कृत का गहन अध्ययन और प्राचीन विद्वानों, ऋषि–मुनियों तथा वैदिक वाङ्मय का मन्थन एवं स्वाध्याय था।

वेद में एक मंत्र आता है– 'यदजः प्रथमं भि

संमबभूव सहत्वत् स्वराज्यमियाम। यस्मान्नान्यत् परमस्ति भूतम्।'

अर्थात् जब कर्मयोगी प्रजागण सबसे प्रथम संगठित होता है, तब वह स्वराज्य प्राप्त करता है जिससे श्रेष्ठ कोई दूसरा राज्य नहीं है। तब निश्चय ही ऋषि इसी अवधारणा के अन्तर्गत प्रजागण अर्थात् जनता को संगठित करने के कार्य में किसी न किसी रूप में अवश्य दत्त चित्त रहे होंगे।

इन्हीं तथ्यों के आधार पर कहा जा सकता है कि सन् 1857 के प्रथम स्वतंत्रता संग्राम के समय ऋषि मौन साध कर कोने में नहीं बैठे रहे होंगे। उस समय के विद्रोही नेता नाना जी तथा तात्या टोपे को यदि इस क्रान्ति में किसी रूप में सहयोग दिया हो तो कुछ आश्चर्य नहीं। कुछ विचारकों ने तो इन दोनों देशभक्तों के अतिरिक्त रानी लक्ष्मी बाई तथा अजीमुल्ला खाँ का ऋषि से एक निश्चित स्थान पर पारस्परिक संवाद होते भी दिखाया है, परन्तु इसका कोई ठोस पुष्ट प्रमाण नहीं मिलता सन् 1856 से 1858 तक का ऋषि का जीवन अज्ञातवास का जीवन है। यह सम्भावना भी हो सकती है कि उस समय वे भूमिगत होकर कार्य करते रहे हों। जैसी कि उस समय की स्थिति थी, हाँ नाना जी की भाँति वे युद्ध क्षेत्र में खुलकर नहीं आये। कदाचित् सशस्त्र क्रान्ति उनके सन्यासाश्रम धर्म के अनुकूल भी नहीं थी। यह तो सिद्ध है कि आगे चलकर देश के अनेक युवकों ने उनसे क्रान्ति की प्रेरणा ली और भारत की स्वाधीनता की वेदी पर अपना बलिदान दिया।

विश्व के आदि राज धर्म शास्त्र प्रणेता मनु के आधार पर महर्षि ने ग्राम पंचायत से लेकर चक्रवर्ती साम्राज्य तक का चित्र सत्यार्थ प्रकाश के छठे समुल्लास में अंकित किया है। 'राष्ट्र के मंत्रियों, राजदूतों तथा सम्बन्धित राज्यों के साथ सम्बंधों की योजना की विशद व्याख्या की है। सैन्य शिक्षा, व्यूहनिर्माण, दुर्ग निर्माण के प्रकारों का भी दिग्दर्शन कराया है। इसके साथ शाश्वत दण्डनीति, न्याय व्यवस्था आदि पर भी सम्यक् प्रकाश डाला है।

ऋषि ने छोटे–छोटे राज्यों में देश के विभक्त होने का प्रबल विरोध किया है और व्यापक साम्राज्य की स्थापना का समर्थन किया है। इतना ही नहीं भूमण्डल भर में आर्य चक्रवर्ती साम्राज्य स्थापित करने की ओर भी संकेत किया है, और भारत के प्राचीन इतिहास के आधार पर यह प्रमाणित किया है कि सम्राट स्वायम्भुव से लेकर युधिष्ठिर पर्यन्त संसार में आर्यों का चक्रवर्ती सम्राज्य स्थापित रहा है।

आपसी फूट, दलबन्दी, आलस्य, प्रभाव व निहित स्वार्थों का भी ऋषि ने विरोध किया है। उन्होंने भारत की पराधीनता पर अश्रुप्रात करते हुए इन राक्षसी वृत्तियों का भारत के शासन से निराकरण करने पर बल दिया है।

ग्यारहवें समुल्लास की प्रारम्भिक पँक्तियों में ऋषि की उस भावना का भी परिचय मिलता है जिससे प्रेरित होकर उनको मत मतान्तर के खण्डन का कठोर और अप्रिय कार्य करने के लिये मजबूर होना पड़ा। वहाँ प्रारम्भ में ही ऋषि ने लिखा है कि सृष्टि से लेकर पाँच सहस्त्र वर्षों से पूर्व समय पर्यन्त आर्यों का सार्वभौम चक्रवर्ती अर्थात् भूगोल में सर्वोपरि एकमात्र राज्य था। अन्य देशों में माण्डलिक अर्थात् छोटे–छोटे राजा रहते थे। ऋषि ने लिखा है कि सृष्टि से लेकर महाभारत पर्यन्त चक्रवर्ती सार्वभौम राजा आर्यकुल में ही हुए। अब इनके संतानों का अभाग्योदय होने से राज्य भ्रष्ट होकर विदेशियों के पादाक्रान्त हो रहे हैं।

ऋषि ने आठवें समुल्लास में बड़े दुखी मन से लिखा है– 'अब अभाग्योदय से और आर्यों के आलस्य, प्रभाव, परस्पर के विरोध से अन्य देशों में राज्य करने की तो कथा ही क्या कहानी, किन्तु आर्यावर्त में भी आर्यों का अखण्ड, स्वतंत्र, स्वाधीन, निर्भय राज्य इस समय नहीं है। जो कुछ है, सो भी विदेशियों के पदाक्रान्त हो रहा है। कुछ थोड़े से राजा स्वतंत्र हैं। दुर्दैव जब आता है तब देश वासियों को अनेक प्रकार के दुख भोगना पड़ जाता है। ऋषि दयानन्द बराबर इन दुर्बलताओं को उजागर करके भारतीयों के हृदय में उत्कृष्ट राष्ट्रीय भावनाओं को जागृत करना चाहते थे। वे स्वराज्य के लिये देशवासियों में स्वाभिमान और आत्मगौरव की भावना जगा कर उन्हें वही प्राचीन गौरव और महत्त्व दिलाना चाहते थे।

उनकी राष्ट्रीयता, देश प्रेम और राष्ट्रभक्ति का स्रोत वे वेद मंत्र हैं जिन्हें प्रार्थना के रूप में प्रयुक्त किया गया है। ऋषि ने अनेक मंत्रों का अर्थ करते हुए ईश्वर के लिए राजाधिराज, सम्राट, महाराजाधिराज आदि विशेषणों का प्रयोग किया है। ऋषि एक वेद मंत्र का भावार्थ करते हुए लिखते हैं– 'अन्य देशवासी राजा हमारे देश में कभी न हों, तथा हम लोग पराधीन कभी न हों।'

विदेशी रंग ढ़ंग, चाल चलन तथा भावना ऋषि को सर्वथा अस्वीकार्य थी। ब्रह्मसमाजियों तथा प्रार्थना समाजियों का विदेशी नकल करना उनकी दृष्टि में स्वाभिमान और स्वदेशाभिमान के पूर्णतया विपरीत था। यद्यपि उन्होंने इन समाजों के साथ मिलकर कार्य करने का भी कुछ विचार किया था, किन्तु देश भक्ति की भावना की कमी देख ऋषि का हृदय खिन्न हो गया और बड़ी वेदना के साथ उन्होंने लिखा 'इन लोगों में स्वेदश भक्ति बहुत न्यून है। भला सब आर्यावर्त देश में उत्पन्न हुए हैं और इसी देश का अन्न जल खाया पिया और अब भी खाते पीते हैं, तब अपने माता पिता तथा पितामहादि के मार्ग को छोड़ दूसरे विदेशी मतों पर अधिक झुक जाना और एतद्देशस्थ संस्कृत विद्या से रहित अपने को विद्वान प्रकाशित करना, इंगलिश भाषा पढ़ के पंडिताभिमानी होकर झटिति एक मत चलाने में प्रवृत होना, मनुष्यों का स्थिर और वृद्धि कारक काम क्यों कर हो सकता है। यहाँ ऋषि के एक एक शब्द से स्वदेश, स्वभाषा तथा स्वधर्म से प्रेम और अपने पूर्वजों के प्रति स्वाभिमान की भावना अभिव्यक्त हुई है।

सत्यार्थ प्रकाश में ऋषि ने तीन सभाओं अर्थात् धर्मार्य सभा, विद्यार्य सभा तथा राजार्य सभा बनाने का आदेश भी दिया, परन्तु आर्य समाज ने धर्मार्य सभा तथा विद्यार्य सभाओं की ओर तो कुछ ध्यान दिया पर राजार्य सभा की ओर से समाज प्रायः उदासीन ही रहा।

अन्त में यह कहना सर्वथा उपयुक्त होगा कि ऋषि दयानन्द यथार्थ रूप में भारत राष्ट्र के युग निर्माता थे। उन्होंने राष्ट्र निर्माण सम्बन्धी मूल तत्त्वों को भलीभाँति हृदयंगम किया था। इस दिशा में ऋषि दयानन्द विहित मार्ग दर्शन से ही भारत वास्तविक रूप में तेजस्वी राष्ट्र बन सकेगा।

24/4 बिशन स्वरूप कालोनी
पानीपत – 132103

ARYA JUGAT III PAPER 09 OCT 2012 lay 2S Tuesday October 16 2012

इयत आयु मयि धेहि

इयदस्यायुरस्यायुर्मयि धेहि युङ्ङसि वर्चोऽसि वर्चोमयि धेहि ऊर्गस्यूर्जं धेहि।
इन्द्रस्य वां वीर्यकृतो बाहूऽअभ्युपावहरामि।।
(यजुर्वेद 10/25)

हे परमेश्वर ''आयुअसि' आपहि हैं जीवन दाता।
जीवात्मा के सयुज सखा हैं, त्राता भाग्य विधाता।।

'इयत आयु' इतना जीवन 'मयि धेहि' मुझको दीजे।
जिसमें योग साधना में निष्णात मुझे कर दीजे।।

आपहि 'युङ' सबको समाधि के दाता ''असि हैं ईश्वर।
वर्चः असि हैं स्वप्रकाश -द्युति रूप स्वयं परमेश्वर।।

अस्तु वर्चः योग साधना से जो तेजस् पाऊँ।
करें कृपा उसको ''मयि धेहि'' मैं धारण कर पाऊँ।।

आप ''अर्क असि'' हैं बलनिधि प्रभु! 'ऊर्जम्' बल के दाता।
'ऊर्जम्'-बल 'मयि' मुझको धेहि दीजे ओज प्रदाता।।

जो मनुष्य ईश्वर उपासना करते प्रेयश पाते।
सुन्दर सुखमय जीवन जीते, प्रभु आश्रय में आके।।

कोई भी बल, और, पराक्रम बिनु प्रभु कृपा न पाता।
उसकी शरण गहे से सर्वोदय अभ्युदय आता।।

प्रभु कहते मैं ''वीर्यकृत:'' बल ओज बढ़ाने हारे।
आश्रय से 'इयदस्य'' सर्व ऐश्वर्य मयि ईश सहारे।।

''वाम्' तुम्हारे 'बाहू'-बल को मैं नजदीक तुम्हारे।
''अभ्युपावहरामि'' स्थापित करता लिये तुम्हारे।।

दयाशंकर गोयल
1554 डी. सुदामा नगर
इंदौर पिन- 452009 (म.प्र.)

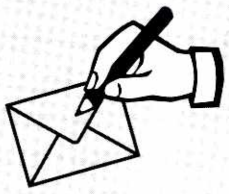

पत्र/कविता

उर्दू और बांग्ला-भाषियों पर न्यूयार्क पुलिस की कड़ी नज़र।

राजनीतिक क्षेत्रों में यह सर्वविदित है कि देश की आन्तरिक सुरक्षा के लिए अमेरिकी हर उस पक्ष की खोज के अभ्यास के आधार पर पैनी दृष्टि रखते हैं, जिसे वे अपने उद्देश्य की पूर्ति के लिए अनिवार्य समझते हैं। हवाई अड्डों पर जूते, निजी बैग, वेलेट या पर्स खुलवाने या कपड़े टटोलने या पूरे शरीर का स्कैन करना तो पुरानी बात हो चुकी अब तो वे एक कदम और आगे बढ़ गए है। दूसरे देश या उनका मीडिया उस पर क्या टिप्पणी करता है। इसकी उन्हें कोई परवाह नहीं रहती है। शायद यही कारण है कि वे अपने सुरक्षा के अन्तिम लक्ष्य में सफल होते रहे हैं और व्यर्थ में राजनीतिक औचित्य की बहस में नहीं पड़ते हैं जहां तक देश की सुरक्षा का प्रश्न है।

हाल के एक समाचार के अनुसार न्यूयार्क पुलिस डिपार्टमेन्ट (एन.वाई. पी.डी.) के विशेष दस्तों ने उर्दू और बांगला भासी लोगों के होटलों, सड़क पर सब्जी-फल या कुछ सामान बेचने वाले स्टोरों या रेस्टारेंटो के कर्मचारियों पर भी कड़ी नजर रखनी शुरू कर दी है। न्यूयार्क पुलिस के कमान्डिंग अफसरों ने इन भाषाओं के समझने वाले विशेष पुलिस का एक दल भी गठित कर डाला है। इसके पहले भी अरबी या चीनी अथवा कोई अन्य भाषा हो उसके विशेषज्ञ तत्सम्बंधी-समाचार बुलेटिनों स्थानीय प्रकाशनों या फोन वार्ता या ई-मेल सम्बन्धी हर अमेरिका-विरोधी सामग्री की बारीकी से जांच करते रहे हैं। आज उर्दू और बंगला भाषी मुस्लिमों पर उनके काम करने की जगह या धार्मिक स्थानों के निकट पैनी नजर रखने के लिए उन्होंने रास्ते निकाले हैं।

न्यूयार्क पुलिस डिपार्टमेन्ट के एक विशेष प्रकोष्ठ के अध्यक्ष थामस गुलाटी अपने स्वयं उर्दू के ज्ञान के कारण दावा करते हैं कि न्यूयार्क के लगभग 80.000 उर्दू भाषी लोग जिसमें पाकिस्तानी और भारतीय मूल के लोग अधिक हैं उन पर इसलिए नजर रखना आवश्यक है क्योंकि उनमें सम्भावित (पोन्शियल) अतिरेकियों के होने की सम्भावना हैं उनके अनुसार न्यूयार्क में 20 से 30 हजार बांगला बोलने वाले लोग भी हैं, जिनके बीच आतंकवादियों के सम्पर्क हो सकते हैं। यह वे अपने अनुभव के अधार पर कह रहे हैं। न्यूयार्क के साथ लांग आईलैण्ड और लगे हुए पूर्वी किनारे के न्यूजर्सी में भी उर्दू बोलने वालों की संख्या बढ़ चुकी हैं जो पाकिस्तानी मूल के अधिक हैं।

मजे की बात यह है कि अमेरिकी गुप्तचर जो पुलिस प्रशासन को अपने सूत्रों से अवगत कराते रहते हैं जिसे जमीन स्तर पर सुरक्षा के लिए अनिवार्य माना जाता है। यह भी कहा जाता है कि न्यूयार्क के पुलिस विभाग द्वारा जातीय वर्गीकरण-रेशियल प्रोफाइलिंग-की पहल के पीछे हाल का एक प्रकरण भी है। इसी वर्ष 13 मई 2012 को सरकारी स्तर पर न्यूयार्क के हारलेम क्षेत्र की एक मस्जिद में 40 वर्ष पूर्व 31 वर्षीय फ़िलिप कारडिलो नामक पुलिस अधिकारी की घेर कर हत्या कर दी गई थी, उसी की याद में चार दशकों बाद उसे प्रशासन ने सार्वजनिक आयोजन द्वारा बड़े स्तर पर उसकी याद को सम्मानित था चार दशक पहले अमेरिका में व्याप्त जातीय देश से वातावरण विषाक्त था और अमेरिकी-मुस्लिमों और पुलिस के बीच बूकलिंन, हारलेय और लेनाक्स एक्वेयू स्थित मस्जिद व नेशनल ऑफ इस्लाम का लुई फरा खान कार्यालय भी था। वहीं यह अफसर मारा गया था और और उसका इतने समय के अन्तराल के बाद मई 2012 का सार्वजनिक सम्मान यह प्रदर्शित करता है कि अमेरीकी भूत काल के हादसे भी नहीं भूलते हैं। शायद इसी मनोवैज्ञानिक पृष्ठ भूमि का लाभ उठाकर पुलिस प्रशासन हर तरह की कड़ाई का समर्थक बनता जा रहा हैं। भारत में साम्रदायिक दंगों में पुलिस के विरुद्व दर्जनों हिंसा के प्रकरण होते रहते हैं पर राजनीतिबाज उन्हें औपचारिक रुप से भी याद करने की जरूरत नहीं समझते हैं।

हरिकृष्ण निगम
ए.1002 पंचशील हाईट्स
महावीर नगर
कान्दिविली (पश्चिम)
मुम्बई- 400067

****

जो लोग यज्ञोपवीत पहने रहते हैं उन्हें ही पहनाना चाहिए

मेरे विचार में जो लोग यज्ञोपवीत उतार देते हैं उन्हें जबरदस्ती क्यों पहनाया जाये? परन्तु मैली तो कोई नहीं उतारता। इसलिये शुभ कार्य के अवसर पर मौली बांधने में क्या बुराई है और माथे पर तिलक लगाना भी गलत नहीं है। महर्षि दयानन्द ने माथे पर उल्टे सीधे तिलक लगाने की ही आलोचना की थी जो शैव और वैष्णव लोग अन्ध विश्वास के कारण लगाते हैं। आर्य लोग रक्षाबन्धन तथा भाई दूज के अवसर पर बहिनें अपने भाईयों के तिलक लगाती हैं अगर सब शुभ अवसरों पर माथे पर साधारण तिलक लगाया जाये तो मेरे विचार में कोई बुराई नहीं है, आर्य समाज को बिना कारण ही सब परम्पराओं का विरोध नहीं करना चाहिए।

अश्विनी कुमार पाठक
वी 4/256 सी केशवपुरम
दिल्ली-35

****

फरीदाबाद में वेद प्रचार

आर्य समाज के 'वेद प्रचार' के सुकाज परम्परा का निर्वाह करते हुए इस वर्ष भी इस कार्यक्रम का सफल आयोजन केन्द्रीय सभा की प्रधाना श्रीमती डा. विमल मेहता एवम् मन्त्री श्री बलबीर सिंह मलिक के सत्प्रयासों से सम्भव हुआ। इस कार्यक्रम की सफलता का प्रमुख श्रेय श्रद्धेय आचार्य स्वामी देवव्रत सरस्वती को जाता है। जिन्होंने अपने अनुभवों एवम् विद्वत्ता के आधार पर 'योग' पर निरन्तर एक सप्ताह प्रातःकालीन एवम् सायंकालीन सत्रों से संशयविहीन ज्ञान गंगा को प्रवाहित किया एवम् फरीदाबाद निवासियों को लाभान्वित किया।

सप्ताहपर्यन्त प्रातःकालीन स्तरों का आयोजन आर्य समाज सैक्टर–7, के सभागार में किया गया। इन सत्रों में 'मन्त्र योग' से ध्यान साधना का क्रियात्मक स्वरूप कराया गया। शारीरिक स्वास्थ्य एवम् अनेक शारीरिक व्याधियों के उपचार में सहायक आसन व व्यायाम का अभ्यास भी स्वामी जी द्वारा कराया गया। अन्तिम दिन साधकों ने अपने अनुभव सुनाए जिनमें उन्होंने बताया कि उपरोक्त विषयों में उन्हें अपेक्षा से अधिक लाभ हुआ।

सायंकालीन सत्रों का आयोजन आर्य समाज सैक्टर– 15, एन.एच.–4, चावला कालोनी, नेहरू ग्राउंड में किया गया। इन सत्रों में 'मन्त्रयोग 'राजयोग' 'ज्ञानयोग' 'भक्तियोग' 'कर्मयोग' 'क्रियायोग' पर स्वामी जी महाराज द्वारा प्रतिदिन डेढ़ घण्टा चर्चा की गई। इन प्रवचनों में आर्यजनों की इन विषयों से सम्बन्धित अनेक भ्रांतियाँ दूर हुईं। सभी साधक आचार्य डा. देवव्रत सरस्वती जी के आयुपर्यन्त आभारी रहेंगे जिन्होंने अपने 'ज्ञान–प्रकाश' से उन्हें विद्यायुक्त किया।

आर्य समाज डी.ए.वी. कालेज अम्बाला शहर में वेद प्रचार सप्ताह मनाया गया

आर्य समाज डी.ए.वी. कालेज मार्ग के तत्वावधान में तीन दिवसीय वेद प्रचार महोत्सव का आयोजन 13 सितम्बर 2012 तक हुआ। आचार्य देवव्रत गुरुकुल कुरुक्षेत्र ने तीन दिन महर्षि दयानंद के जीवन, वेदों तथा आत्मा परमात्मा आदि विषयों पर अपने व्याख्यान दिये। श्री रामनिवास आर्य ने अपने भजनों के द्वारा वेदों का महत्व तथा ईश्वर स्तुति पर भजन सुनाए। स्वामी करुणानन्द जी संन्यासी भी इस कार्यक्रम में उपस्थित रहे। बड़ी संख्या में आर्य जनों ने पहुँच कर कार्यक्रम की शोभा बढ़ाई। आखिरी दिन हवन यज्ञ किया गया। श्री राजेन्द्र नाथ, उपप्रधान, डी.ए.वी. कालेज मेनेजिंग कमेटी नई दिल्ली, 15 सितम्बर को मुख्य अतिथि थे। श्री राजेन्द्र नाथ ने इस अवसर पर कार्यक्रम के सफल आयोजन पर सभी को बधाई दी तथा कहा कि आर्य समाज के समारोह आगे भी इसी प्रकार आयोजित होते रहने चाहिएँ। श्री विवेक कोहली, प्राचार्य, सोहन लाल शिक्षण महाविद्यालय, ने सभी का धन्यवाद किया। इस अवसर पर आर्य समाज रेलवे रोड, आर्य समाज माडल टाउन, आर्य समाज नारायण गढ़, आर्य समाज जण्डली के प्रतिनिधि शामिल हुए तथा सभी शिक्षा संस्थाओं के प्राचार्य तथा स्टाफ के सदस्य भी इस समारोह में शामिल हुए। श्री शाम सुन्दर शर्मा मंत्री आर्य समाज ने मंच संचालन किया। अन्त में शान्ति पाठ तथा ऋषि लंगर के साथ कार्यक्रम का समापान हुआ।

जनकपुरी में 'तत्सत्' वेदवाक्य पर प्रवचन

आर्य समाज, बी–ब्लाक, जनकपुरी नई दिल्ली में वरिष्ठ वैदिक विद्वान डॉ. शिवकुमार शास्त्री जी ने 'तत्सत् वेद वाक्य पर प्रवचन करते हुए कहा कि वह परमात्मा निश्चित रूप से है। समस्त संसार का निर्माता परमात्मा ही है। उसका निर्माण अपने आप में पूर्ण है। बनाने वाला जानता है कौन सी चीज कहाँ लगानी है। मानव का निर्माण किया शरीर के अङ्ग प्रत्यङ्ग बनाए, जुबान बनायी, आंखे बनायी, कान बनाए, हृदय आदि का स्थापन किया किसने? ऐसा बुढ़ापा जिसे कोई नहीं चाहता फिर भी त्वचा सिकुड जाती है, बाल सफेद हो जाते हैं, शरीर जीर्ण होकर रोगयुक्त हो जाता है। मानव किसी वस्तु का निर्माण करता है तो उसकी गारंटी–वारंटी होती हैं, परन्तु इस शरीर की कोई गारंटी–वारंटी नहीं है। कुछ लोग इस संसार में हताश–निराश होते हैं, भगवान को कोसते हैं,मानव की अपनी सोच है– मुण्डे–मुण्डे मतिर्भिना। सन्तान का निर्माण यदि माता–पिता के हाथ में होता तो कोई विक्लांग, कमजोर, बीमार, मन्दबुद्धि एवं बूढ़ा न होता। अथाह समुद्र है, विशाल हिमालय है, चारों और नदियां हैं, पहाड़ हैं, वन हैं किसने बनाये? अनेकों वैज्ञानिको ने अरबों लगाकर छोटे से कण को जाना, अरे परमात्मा तो असीमित है, सारा विज्ञान मिलकर हिमालय का भी निर्माण नहीं कर सकता। हाँ, वेद उसको जानो अपने तक सीमित रहें, सगे –सम्बन्धियों तक या मित्रों तक। सबसे बढ़िया मित्र ईश्वर है पूर्ण सामर्थ्य से ईश भक्ति करें। जो परमात्मा के आदेशों का पालन नहीं करता वह परमात्मा का विरोधी है, ईश्वर को नहीं मानते आवागमन के चक्कर में रहेगें। परमात्मा इन्दियों का विषय नहीं, ईश्वर का साक्षात्कार करना ही योग है, आसन एवं प्राणायाम पूर्ण योग नहीं। जो उस ईश्वर को नहीं जानता, ऋचाएँ उसका क्या करेंगी? कुछ भी तो नहीं।

प्रधान डॉ. सुन्दर लाल कथूरिया जी ने कहा कि वो ईश्वर है। अगर ईश्वर को नहीं जाना तो वेद मन्त्रों का लाभ नहीं। सभी मन्त्र विधि–निषेध द्वारा हमारा मार्ग दर्शन करते हैं। यदि वेद के विचारों को आचरण में नहीं उतारा तो हमें वेद भी पवित्र नहीं कर सकते। कहा है– आचारहीनं न पुनन्ति वेदाः। नास्तिकों की संख्या बढ़ रही है, अन्यों को हम वेदानुकूल बनाने का प्रयास करें। प. अशोक आर्य जी (भजनीपदेशक) ने ईश भक्ति का सुमधुर भजन प्रस्तुत किया।

आर्य समाज नकुड (सहारनपुर) का 62 वाँ वार्षिकोत्सव

आर्य समाज नकुड (सहारनपुर) का 62 वाँ वार्षिकोत्सव दिनांक 22, 23, 24 नवम्बर 2012 को मनाया जा रहा है। इस अवसर पर आर्य जगत् के उच्चकोटि के विद्वान आचार्य विष्णु मित्र जी वेदार्थी (नजीबाबाद) आचार्य रणबीर जी शास्त्री (नकुड़) श्री सत्यवीर सिंह आर्य भजनोपदेशक (बुलन्द शहर) श्री प्रताप सिंह आर्य (सहारनपुर) पधार रहे हैं। इस अवसर तीनों दिन विभिन्न सम्मेलनों का आयोजन किया जायेगा।

Delhi Postal R. No. D.L. (ND)-11/6066/2012-14
अग्रिम अदायगी के बिना भेजने का लाइसैंस नं. U(C)-103/2012-14
POSTED AT N.D.P.S.O. ON 17-18/10/2012
रजिस्ट्रेशन नं. आर० एन० आई० 39/57

एस.के.बी.डी.ए.वी. फाज़िल्का में हुआ वनमहोत्सव का आयोजन

आर्य युवा समाज श्रीमती कर्मबाई डी.ए.वी. शताब्दी स्कूल फाजिल्का द्वारा वन महोत्सव का आयोजन विद्यालय के प्रधानाचार्य श्री एम.शर्मा की अध्यक्षता में किया गया। श्री एच.आर गन्धार–प्रधान सलाहाकार समिति डी.ए.वी. कालेज मनेजिगं कमेटी नई दिल्ली मुख्य अतिथि के रूप में तथा डा. संजीव अरोड़ा प्रिं. डी.ए.वी. कालेज अबोहर विशिष्ट अतिथि के रूप में पधारे। श्री एच.आर.गान्धर ने अपने हाथों से पौधा लगाकर वृक्षारोपण का शुभारम्भ किया। आर्य युवा समाज के प्रकल्पों की चर्चा करते हुए प्रिं एम.शर्मा ने कहा कि आर्य सुवा समाज के निर्देशन में वेद प्रचार, हवन यज्ञ, वृक्षारोपण, वृद्ध सत्कार आदि अनेक कार्य सुचारू ढंग से चल रह हैं। फाजिल्का की आर्य युवा समाज ने यह प्रमाणित कर दिया है कि आर्य समाज का भविष्य अत्यन्त उज्ज्वल है।

डी.ए.वी. मालेरकोटला में शिक्षकों को दी गई प्रेरणा

डी.ए.वी. पब्लिक स्कूल मालेरकोटला (पंजाब) में स्कूल के धर्माचार्य दयानिधि शास्त्री के ब्रह्मत्व में बृहद् यज्ञ का आयोजन किया गया। यज्ञ के मुख्य यजमान विद्यालय के प्राचार्य श्री टी.सी. सोनी थे। विद्यालय के सभी स्टाफ और विद्यार्थियों ने पवित्र वैदिक मंत्र उच्चारण करते हुए स्वाहा उपरान्त अग्नि में आहुतियाँ प्रदान कीं। विद्यालय के प्रिंसिपल श्री टी.सी.सोनी जी ने अध्यापकों को सम्बोधित करते हुए कहा कि अध्यापक भाग्य निर्माता होता

है अतः अध्यापकों को निःस्वार्थ भाव के साथ कार्य करना चाहिए। तभी हम सब महात्मा हंसराज और स्वामी दयानन्द सरस्वती जी के उद्देश्यों को पूरा कर सकेंगे। विद्यालय के सभी अध्यापक वर्ग ने यह संकल्प लिया कि हम सब योग्य और कर्मठ अध्यापक बनकर बच्चों को शिक्षा प्रदान करेंगे। के प्राचार्य श्री टी.सी.सोनी ने शिक्षकों को प्रशंसा पत्र देकर सम्मानित किया तथा विशेष रूप से मुबशरा कुरैशी को बेस्ट टीचर अवार्ड देकर सम्मानित किया गया।

डी.ए.वी. विद्यालय जीन्द ने जाना संस्कृत का महत्व

डी.ए.वी. जीन्द में वेदों की वाणी संस्कृत भाषा की गरिमा को बनाए रखने के लिए, बच्चों में वैदिक संस्कारों के उत्थान के लिए संस्कृत दिवस मनाया गया। प्रार्थना सभा की सभी गतिविधियां, प्रश्नोत्तरी पर आधारित लघु–नाटिका आदि सभी कार्यक्रम संस्कृत भाषा में आयोजित किए गए। इस अवसर पर 'राखी बनाओ प्रतियोगिता' का आयोजन भी किया गया। सभी कक्षा अध्यापकों ने विद्यार्थियों को तिलक लगाकर एवं मौली बाँधकर सत्य एवं ईमानदारी के साथ दायित्व निर्वाह का संकल्प लिया। विद्यालय प्राचार्य श्री हरेश पाल पांचाल जी ने अपने सम्बोधन में कहा कि हमें पाश्चात्य संस्कृति का अन्धानुकरण न करके वैदिक संस्कृत की रक्षा करनी चाहिए एवं सभी भाषाओं को समान महत्व देते हुए ज्ञान अर्जन करना चाहिए। कार्यक्रम के अन्त में प्राचार्य महोदय द्वारा संस्कृत दिवस के सफल आयोजन की सबको बधाई व शुभकामनाएं दी गईं।

वैदिक मोहन आश्रम हरिद्वार में हुई गुरु के दायित्व पर चर्चा

महर्षि दयानन्द सरस्वती जी की कर्म स्थली वैदिक मोहन आश्रम में संचालित हो रहे बी.एम. डी. ए. वी. पब्लिक स्कूल में अध्यापक दिवस बड़े धूमधाम के साथ मनाया गया इस अवसर पर एक सभा का आयोजन किया गया जिसमें विद्यालय के छात्र छात्राओं ने अपने सांस्कृतिक कार्यक्रम भी प्रस्तुत किये। सभा में मुख्य अतिथि के रूप में पधारे श्री वी.एस. धनिक जी (मुख्य विकास अधिकारी, हरिद्वार) ने अपने उद्बोधन मे कहा कि आज प्रत्येक विद्यार्थी को अपने शिक्षक का समान करना चाहिये। आज विद्यार्थी अपने पथ से भटकता हुआ प्रतीत हो रहा है, आज हमें चाहिए कि हम अपने इन विद्यार्थियों को सही मार्ग दिखायें। इस अवसर पर श्रीमान अजय ठाकुर जी ने भी अपने विचारों के माध्यम से बच्चों को श्रेय मार्ग पर चलने की प्रेरणा दी। स्कूल के प्राचार्य श्री यशवीर सिंह जी ने भी अपने वक्तव्य में कहा कि आज का शिक्षक अपने कर्तव्य का ठीक प्रकार से पालन नहीं कर रहा है, वह केवल अपनी आजीविका चलाने के लिये अपनी सेवा दे रहा है। क्या वास्तव में यही शिक्षक का कर्तव्य है? उन्होंने आगे कहा कि आज से सैकड़ों वर्ष पूर्व एक आचार्य ने आकर के अपने सामाजिक धर्म को निभाते हुए सोये हुए देश को फिर से जगा दिया। आज हम सब शिक्षक मिल करके यह संकल्प लें कि इस देश से अज्ञानता व सामाजिक कुरीतियों को दूर करेंगे। इस अवसर पर आश्रम के प्रबन्धक श्रीमान धनीराम जी व श्रीमान विनीत त्यागी जी एवं विद्यालय के सभी शिक्षकगण उपस्थित थे।

मुद्रक व प्रकाशक – **श्री प्रबोध महाजन,** सभा मंत्री द्वारा **मदन गोयल** के प्रबंध में **अरावली प्रिंटर्स एण्ड पब्लिशर्स (प्रा.) लि.,** डब्ल्यू–30, ओखला, फेस–II, नई दिल्ली–110020 (दूरभाष : 26388830–32) से मुद्रित कार्यालय **'आर्य जगत्'** आर्यसमाज भवन, मन्दिर मार्ग, नई दिल्ली–110001 से प्रकाशित। स्वामित्व – आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा, मन्दिर मार्ग, नई दिल्ली–110001 (दूरभाष : 23362110, 23360059) सम्पादक – **श्री पूनम सूरी**